भाग – 1 , अंक – 1
मार्च 2025

कृषि दर्पण

इ– हिंदी पत्रिका

KRISHI DARPAN UTTARAKHAND

krishi darpan | krish_idarpan | LinkedIn https://www.linkedin.com/in/krishidarpan-9a33292a4/ | www.krishidarpan.in

विषय-सूची

01 चमेली की खेती के लाभ किसानों के लिए आर्थिक संभावनाएं
पूर्णिमा सिंह सिकरवार (सहायक प्रध्यापक , उद्यान विभाग , शुआट्स प्रयागराज यू0 पी0) **06-09**

02 सटिक कृषि के लिए ड्रोन
इंजि. मंजित, डॉ. भूषण, डॉ. कल्याणी , इंजि. समिक्षा , इंजि. पूजा (भा. कृ. अनु. प. प्याज एवं
लहसुन अनुसंधान निदेशालय, राजगुरूनगर, पुणे
(डॉ. बालासाहेब सावंत कोंकण कृषि विश्वविद्यालय, दापोली) **10-13**

03 गेहूं के गुलाबी तना छेदक
निशा चढ़ार, डॉ. द्वारका (महाराज छत्रसाल बुंदेलखंड विश्वविद्यालय, शासकीय स्नातकोतर उत्कृष्ट महाविद्यालय,
एम0 पी0, जे0 ऐन0 के0 बी0 जबलपुर , एम0 पी0) **14-15**

04 अमरूद की अतिसघन खेती/मीडो बागवानी
अशोक कुमार, ईश्वर सिंह , अंकित कुमार सती (शोधार्थी, उद्यानिकी विभाग,
हेमवती नंदन बहुगुणा गढ़वाल विश्वविद्यालय , श्रीनगर उत्तराखंड) **16-19**

05 शुष्क क्षेत्रों में लद्यु एवं सीमांत कृषकों के लिए लाभप्रद व्यवसाय - कमलम उत्पादन
सौरभ सिंह , डॉ. आनंद सिंह, डॉ बिजेन्द्र कुमार सिंह (शोध छात्र, फल विज्ञान विभाग, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि
एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय , अयोध्या) फल विविज्ञान विभाग, बाँदा कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, बाँदा) **20-21**

06 वन उत्पादों के माध्यम से ग्रामीण अर्थव्यवस्था का संबंधन
नरेश सिंह , अतुल कुमार (वानिकी महाविद्यालय, रानीचौरी , टिहरी गढ़वाल , उत्तराखंड) **22-23**

07 पर्णपाती फलदार पेड़ों में कटाई
डॉ. धर्मपाल (उप उष्ण कटिबंधीय फल केंद्र लाडवा, कुरूक्षेत्र (इंडो-इजराइल परियोजना), उद्यान विभाग, हरियाणा **24-25**

08 सरसों : भारत की एक महत्वपूर्ण तिलहनी फसल
पुशपेन्द्र कुमार मिश्रा , आर्दश डंगवाल (शोधार्थी जी0 बी0 पी0 यू0 ऐ0 टी0 , पंतनगर) **26-27**

09 संरक्षण कृषि भूमि स्वास्थय और सुरक्षा की दिशा में एक नई पहल
उमेश कुमार, अभिषेक कुमार सिंह, अनिल कुमार (शोध छात्र , मृदा विभाग एवं शस्य विज्ञान विभाग ,
सरदार वल्लभभाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय , मेरठ **28-30**

10 कृषि व्यवसाय में डिजिटलाइजेशन का प्रभाव
दिव्या बंगारी (कुमाउँ विश्वविद्यालय, नैनिताल , उत्तराखंड **31-33**

11 नैनो कीटनाशक : आधुनिक कृषि की नई दिशा
डॉ. संजीव कुमार, देवेन्द्र मंडल , डॉ. सी0 एस0 आजाद (बिहार कृषि विश्वविद्यालय, सबौर, भागलपुर, बिहार) **34-35**

Advisory Board

Prof. (Dr.) J. S. Chauhan (प्रो० डॉ. जे. ऐस. चौहान)
H. N. B. Garhwal University (A Central University), Srinagar

Prof. (Dr.) Purushotam Kumar (प्रो० डॉ. पुरूषोतम कुमार)
Head KVK, Dhanauri, Haridwar (G.B.P.U.A.T., Pant Nagar)

Prof. (Dr.) Anoop Badoni (प्रो० डॉ. अनूप बडोनी)
Sr. Scientist and Director, PLANTICA-IARD
Dehradun & Professor (Visiting) Geeta University,
Panipat, Haryana

Dr. S. P. S. Solanki (डॉ. एस. पी. ऐस. सोलानकी)
District Horticulture Officer, Karnal, Govt. of Haryana

संपादक मंडल
(EDITORIAL BOARD)

प्रधान संपादक (Editor-in-Chief)

Prof. (Dr.) J. S. Chauhan (प्रोफेसर (डॉ-)जय सिंह चौहान)

Head Department of Seed Science and Technology,
H. N. B. Garhwal University
(A Central University), Srinagar, Uttarakhand
E-mail: js.chauhan@hnbgu.ac.in / js99chauhan@gmail.com

प्रबंध संपादक (Managing Editor)

Mr. Chandan Kumar (श्री चंदन कुमार)

Ph.D. (P), M. Sc. (Ag), MAPSR,
Centre Head,
Krishi Darpan- Centre for Agricultural Innovation,
Research and Training (CAIRT),
Shivam Vihar, Kedarpuram,
Doon University Road, Dehradun, Uttarakhand
E-mail: krishidarpanddn@gmail.com

सह – प्रबंधक संपादक (CO-Managing Editor)

Mr. Madhwendra Pathak (संपादक – मंडल)

Ph.D (p),M.sc (Seed Science & Technology)
Research Schollar,Chandra Shekhar Azad
University Of Agriculture & Technology
E-mail: kumarmadhwendrapathak97@gmail.com

संपादकगण

Dr. R. P. Srivastav (डॉ. आर. पी. श्रीवास्तव)
Associate Professor, Department
of Agriculture Sciences, Mandsaur University,
By Pass Square, Revas Devda Road, S.H.-31, Mandsaur (M.P) -458001
E-mail: ramprakash.srivastava@meu.edu.in

Dr Ardeep Kumar (डॉ. अरदीप कुमार)
Ph.D., M.Sc.
Scientist- Agronomy
Krishi Vigyan Kendra, VCSG Uttarakhand University of Horticulture and
Forestry, Bharsar, Pauri Garhwal- 246123
E-mail: ardeepkumarr4@gmail.com

Dr. Priya Awasthi (प्रिया अवस्थी)
Professor Department of Post Harvest Technology,Banda University of
Agriculture and Technology, Banda (UP)-21001
E-Mail-awasthi.coa.PA@gmail.com

Dr. Vigya Mishra, Ph.D,M.sc (डॉ. विज्ञा मिश्रा)
Assistant Professor, Department of Post Harvest technology, Banda University of
Agriculture and Technology, Banda (UP)-21001
E-Mail: drvigya.hort@gmail.com

Dr.Balaji Vikram, Ph.D,M.sc (डॉ. बाला जी विकरम)
Assistant Professor Department of Post Harvest technology, Banda University of
Agriculture and Technology, Banda (UP)-21001
E-Mail:balajivikramallahabad@gmail.com

Dr.Purnima Singh,Ph.D,M.sc (डॉ. पूर्णिमा सिंह)
Assistant Professor Department Of Horticulture Sam Higginbottom University of Agriculture,
Technology & Sciences,(SHUATS) Prayagraj(UP),211001
E-mail-: pari.jhunni@gmail.com

Dr.Amit Kumar, Ph.d,M.sc (डॉ. अमित कुमार)
Assistant Professor Department of Vegitable Science (VEGITABLE BREEDING), Birsa
Agriculture College,Jharkhand Ranchi 834001
E-mail :- amit.koon@gmail.com

Dr.Pooja Sharma, Ph.D, M.sc (डॉ. पूजा शर्मा)
SRF,Fruit ScienceDr. Yashwant Singh Parmar University of Horticulture & Forestry
Nauni,Solan-Himachal Pardesh.173211
E-mail: poojasharma60622@gmailcom

Dr.Deepali Joshi , Ph.D , M.sc (डॉ. दीपाली जोशी)
Principal himalyan institute of technology , Raipur Dehradun
E-mail: Deepaliaswal21@gmailcom

Dr.Paramjeet Sajwan , Ph.D , M.sc (डॉ. परमजीत संजवान)
College of Forestry ,Ranichauri Guest Faculty Horticulture (Fruit Science) 248199
E-mail: paramjeetsajwan91@gmailcom

Mrs.Anita Trivedi Bhatt , M.sc,Ph.D (p) (श्रीमती अनीता त्रिवेदी भट्ट)
Shri Guru Ram Rai University, Patel Nagar,
Dehradun (Uttarakhand) India - 248001
E-mail: anitatrivedibhatt16@gmailcom

Ms. Aparna Jyoti , M.sc, Ph.D (P) (श्री अपरना ज्योती)
Research Schollar,Chandra Shekhar Azad University Of Agriculture &Technology , 208001
E-mail: jyoti.aparna06@gmail.com

Dr. Yuvraj Yadav (डॉ युवराज यादव)
Associate Professor, School of Agriculture
Studies, Geeta University, Naultha, Haryana
E-mail: dryuvraj.agri@geetauniversity.edu.in

Dr. Anjay Singh Bisht (डॉ. अंजय सिंह बिष्ट)
Assistant Professor, School of Agriculture Studies, Quantum
University, Roorkee – Dehradun Highway, Mandawar, Roorkee, Uttarakhand
E-mail: anjay.agr@quantumeducation.in

Mr. Naveen Chandra (श्री नवीन चंद्र)
Assistant Professor, School of Agriculture Studies, Quantum University,
Roorkee – Dehradun Highway, Mandawar, Roorkee, Uttarakhand
E-mail: naveenchandra.agr@quantumeducation.in

Mr. Shailendra Tiwari (श्री शैलेन्द्र तिवारी)
Department of Seed Science and Technology, H. N. B. Garhwal University
(A Central University), Srinagar, Uttarakhand
E-mail: shailendratiwari@hnbgu.ac.in

Dr. Subhash Chandra Singh (श्री सुभाष चंद्र सिंह)
Associate Professor , Department of Fruit Science
College of Horiculture , Banda University of Agriculture and Technology , Banda (U.P)
E-mail: subhs_5@rediffmail.com

चमेली (Jasmine) की खेती के लाभः किसानों के लिए आर्थिक संभावनाएं

पूर्णिमा सिंह सिकरवार
सहायक प्राध्यापक (उद्यान विभाग)
(शुआट्स) प्रयागराज (यू0 पी0)
ईमेल - hhpurnima2@gmail.com

चमेली का पौधा न केवल अपने खूबसूरत फूलों, पत्तियों, तनों और जड़ों से वातावरण को महकाता है, बल्कि इसके औषधीय गुण भी इसे अद्वितीय बनाते हैं। इसकी मोहक खुशबू और स्वास्थ्य लाभकारी विशेषताओं के कारण चमेली का पौधा दुनियाभर की कई संस् तियों और परंपराओं में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। हाल के वर्षो में, चमेली की खेती में तकनीकी सुधार और नई विधियों का इस्तेमाल किया गया है, जिससे इसकी गुणवत्ता और उत्पादकता में वृद्धि हुई है।
भारत में चमेली की खेती काफी विस्तृत रूप से की जाती है, और तमिलनाडु इस क्षेत्र में अग्रणी राज्य है। यहां पर उन्नत खेती तकनीकों जैसे ड्रिप इरिगेशन, उर्वरक प्रबंधन और जैविक कृषि पद्धतियों का उपयोग किया जा रहा है, ताकि फूलों की गुणवत्ता और पैदावार बढ़ाई जा सके। इसके अलावा, उत्तर प्रदेश के फर्रुखाबाद, जौनपुर और गाजीपुर जैसे जिलों में भी चमेली की खेती बड़े पैमाने पर की जाती है।
चमेली के फूल सामान्यतरू सफेद रंग के होते हैं, जो शांति, पवित्रता और सौंदर्य का प्रतीक माने जाते हैं। हालांकि, कुछ क्षेत्रों में पीले रंग के फूलों वाली चमेली भी पाई जाती है, जो इसे और अधिक आकर्षक और विशिष्ट बनाती है। हाल के समय में, पीले चमेली की किस्मों का भी वाणिज्यिक उपयोग बढ़ा है, और उन्हें उच्च मूल्य वाले फूलों के रूप में बेचा जा रहा है।

चमेली के उपयोग

चमेली एक बहुपयोगी पौधा है, जिसके फूल, पत्ते, तना, और जड़ सभी का औषधीय और व्यावसायिक महत्व है। इसके फूलों का उपयोग न केवल सजावट के लिए किया जाता है, बल्कि इनसे सुगंधित तेल, इत्र, और अन्य खुशबूदार उत्पाद तैयार किए जाते हैं। चमेली के फूलों से प्राप्त तेल का उपयोग अरोमाथेरेपी, त्वचा की देखभाल, और बालों की समस्याओं के उपचार में भी किया जाता है। इसके अलावा, चमेली के पत्ते और जड़ का पारंपरिक औषधियों में उपयोग किया जाता है, जो विभिन्न बीमारियों जैसे बुखार, तनाव, और त्वचा विकारों के इलाज में सहायक होता है।
भारत में चमेली के फूलों की बड़ी मात्रा में खेती की जाती है, और यह अंतरराष्ट्रीय बाजार में निर्यात का एक महत्वपूर्ण स्रोत है। भारत से चमेली के फूल श्रीलंका, सिंगापुर, मलेशिया और अन्य दक्षिण-एशियाई देशों को निर्यात किए जाते हैं। इन देशों में चमेली का उपयोग धार्मिक अनुष्ठानों, विवाह समारोहों और अन्य सांस् तिक आयोजनों में भी व्यापक रूप से होता है। इस प्रकार, चमेली का औषधीय, व्यावसायिक और सांस्कृतिक महत्व इसे एक बहुमूल्य पौधा बनाता है।

जलवायु और मिट्टीः

चमेली की खेती के लिए गरम और नम जलवायु सबसे उपयुक्त मानी जाती है, और इस पौधे के लिए जलवायु की विशेषताएँ बहुत महत्वपूर्ण होती हैं। गरम जलवायु में जहां तापमान 25°C से 30°C के बीच रहता है और वातावरण में आदर्श नमी बनी रहती है, वहां चमेली का पौधा बेहतर तरीके से पनपता है। वर्तमान में, जलवायु परिवर्तन के साथ, यह आवश्यक हो गया है कि खेती में सिंचाई और तापमान नियंत्रण तकनीकों का उपयोग किया जाए। तापमान को नियंत्रित करने के लिए हाइपर-थर्मल रेजिस्टेंट किस्मों का चयन किया जा रहा है, जो अधिक तापमान और नमी में भी अच्छी वृद्धि करती हैं। साथ ही, जहां वर्षा कम हो, वहाँ ड्रिप इरिगेशन प्रणाली का उपयोग किया जाता है, जिससे जल की बचत होती है और पौधों को निरंतर नमी मिलती रहती है, जो उनके विकास को बढ़ावा देती है।
मिट्टी की बात करें तो चमेली को विभिन्न प्रकार की मिट्टी में उगाया जा सकता है, लेकिन सर्वोत्तम परिणामों के लिए हल्की बलुई दोमट मिट्टी की सिफारिश की जाती है। इस प्रकार की मिट्टी में जल निकासी की क्षमता बहुत अच्छी होती है, जिससे जड़ों का सड़ना रोका जा सकता है। आधुनिक कृषि पद्धतियों में, पौधों के लिए उपयुक्त मिट्टी के लिए वर्टिकल गार्डनिंग और स्मार्ट स यल म निटरिंग तकनीकों का इस्तेमाल किया जा रहा है, जिससे मिट्टी की नमी, पीएच, और खनिजों की स्थिति की सटीक जानकारी मिलती है। यह पौधों को सही पोषण प्रदान करने और जल निकासी को बेहतर बनाने में मदद करता है। मिट्टी का पीएच 6.5 से 7.5 के बीच आदर्श माना जाता है, और इस रेंज में अधिकतम पोषण अवशोषण होता है, जो पौधों की स्वस्थ वृद्धि के लिए आवश्यक है। इस तकनीकी पद्धति के साथ, ड्रेनेज सिस्टम को और अधिक प्रभावी बनाना भी महत्वपूर्ण है, जिससे जड़ों को पर्याप्त वायु मिलती है और पौधों का विकास मजबूत और स्वस्थ होता है।

सिंचाई

चमेली पौधों को विशेष रूप से उनकी बढ़वार के प्रारंभिक चरणों में अत्यधिक पानी की आवश्यकता होती है। रोपाई के तुरंत बाद, यह अत्यंत महत्वपूर्ण है कि पौधों को पर्याप्त पानी दिया जाए ताकि उनकी जड़ें सही ढंग से स्थापित हो सकें और वे सूखने से बच सकें। इस प्रक्रिया में, ड्रिप इरिगेशन या सबसर्फेस इरिगेशन जैसी आधुनिक सिंचाई विधियों का उपयोग किया जा सकता है, जो पानी के कुशल वितरण और मिट्टी में नमी बनाए रखने में मदद करती हैं। इसके बाद, एक स्थिर सिंचाई कार्यक्रम अपनाना आवश्यक है, जिसमें हर हफ्ते 1-2 बार पानी देना शामिल हो, लेकिन यह पानी देने की आवश्यकता मौसमी बदलाव और मिट्टी की नमी की स्थिति पर निर्भर करती है। बारिश के मौसम में पानी की आवश्यक्ता कम हो सकती है, जबकि गर्मी के मौसम में पानी देने की मात्रा बढ़ाई जा सकती है। जब चमेली के फूल आने लगते हैं, तो पौधों के आसपास की नमी बनाए रखना और मिट्टी में पर्याप्त आर्द्रता बनाए रखने के लिए सिंचाई जारी रखना आवश्यक है, ताकि फूलों की गुणवत्ता और पौधों की वृद्धि प्रभावित न हो। इस संदर्भ में, स्वचालित इरिगेशन सिस्टम और नमी-संवेदनशील सेंसर का उपयोग भी एक उत्कृष्ट विकल्प हो सकता है, जिससे पौधों की सिंचाई में सटीकता और स्थिरता बनी रहे।

फसल सुरक्षा

चमेली की फसल पर कई प्रकार के कीट और रोगों का आक्रमण हो सकता है, जो इसकी वृद्धि और गुणवत्ता को प्रभावित कर सकते हैं। प्रमुख कीटों में मिली बग, जैस्मिन बग, बड वर्म, रेड स्पाइडर माइट, पत्ती काटने वाली सूंडी और सफेद मक्खी शामिल हैं। इन कीटों के कारण पत्तियों, तनों और फूलों को नुकसान हो सकता है, जिससे फसल का उत्पादन प्रभावित होता है। इसके अलावा, चमेली पर कुछ रोग भी होते हैं, जैसे सरकोस्पोरा और जड़ विगलन बीमारी, जो पौधों की समग्र स्वास्थ्य को बिगाड़ सकते हैं।

इन समस्याओं से बचाव के लिए, निम्नलिखित रासायनिक उपचारों का उपयोग किया जा सकता है।

1. कीट नियंत्रण के लिए : कीट नियंत्रण के लिएरू चमेली पर हमला करने वाले कीटों से प्रभावी ढंग से निपटने के लिए हाल ही में विकसित तकनीकों का उपयोग किया जा सकता है। एक उपयुक्त विकल्प मोनोक्रोटोफास है, जिसका प्रयोग 1 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी में मिलाकर किया जाता है। यह घोल कीटों के तंत्रिका तंत्र को प्रभावित करके उन्हें मारता है, जिससे चमेली पर होने वाले कीटों की संख्या कम की जा सकती है। इसके अलावा, सल्फर का छिड़काव भी एक प्रभावी उपाय है, जो कीटों के जीवन चक्र को प्रभावित करने के साथ-साथ उनके प्रजनन को भी रोकता है। सल्फर का प्रयोग कीटों की संख्या को नियंत्रित करने के लिए विशेष रूप से फायदेमंद होता है, क्योंकि यह उनके विकास के विभिन्न चरणों में रुकावट उत्पन्न करता है, जिससे कीटों का प्रजनन और फैलाव थम जाता है।

इसके अलावा, जैविक कीट नियंत्रण विधियाँ भी जैसे नीम के तेल या **BT** (Bacillus thuringiensis) का उपयोग किया जा सकता है, जो पर्यावरण के लिए सुरक्षित और प्रभावी होते हैं।

2. रोग नियंत्रण के लिए : रोग नियंत्रण के लिए, सरकोस्पोरा और जड़ विगलन जैसे फफूंदजनित रोगों से बचाव हेतु कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (**Copper Oxychloride**) एक प्रभावी कीटनाशक है। इस का उपयोग करने के लिए, इसे 1 ग्राम प्रति लीटर पानी के अनुपात में मिलाकर, पौधों पर समान रूप से छिड़काव किया जा सकता है। यह उपचार पौधों की पत्तियों, तनों और जड़ों में रोगजनक कवकों के विकास को रोकने में मदद करता है।

हाल ही में, कुछ उच्च प्रभावी तकनीकों का भी उपयोग किया जा रहा है, जैसे कि ड्रोन तकनीक का इस्तेमाल कर अत्यधिक प्रभावी छिड़काव किया जा सकता है, जिससे छिड़काव में बराबरी बनी रहती है और रासायनिक तत्वों का अपव्यय भी कम होता है। साथ ही, बायोलॉजिकल कंट्रोल एजेंट्स जैसे कि **Trichoderma** या **Pseudomonas fluorescen** को भी उपयोग किया जा सकता है, जो फफूंदजनित रोगों के खिलाफ प्राकृतिक प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाते हैं, जिससे पौधों को स्वस्थ रखने में मदद मिलती है।

इन उपायों से सरकोस्पोरा और जड़ विगलन रोगों के प्रसार को प्रभावी रूप से नियंत्रित किया जा सकता है, और पौधों को लंबे समय तक स्वस्थ रखा जा सकता है।

फूलों की तुड़ाई और उपज

फूलों की तुड़ाई एक अत्यंत महत्वपूर्ण प्रक्रिया है, जिसे सही समय पर और उचित तकनीकी विधियों के साथ किया जाना चाहिए ताकि फूलों की गुणवत्ता और ताजगी बनी रहे। फूलों की तुड़ाई का आदर्श समय तब होता है जब उनकी कलियां पूरी तरह से विकसित हो चुकी होती हैं, लेकिन वे अब तक पूरी तरह से नहीं खिली होतीं और उनकी पंखुड़ियां भी पूरी तरह से खुली नहीं होतीं। इस स्थिति में फूलों में रंग और आकार का पूर्ण विकास हो चुका होता है, जिससे संग्रहण और परिवहन के दौरान उनका गुणवत्ता में कोई कमी नहीं आती और फूल लंबे समय तक ताजे रहते हैं।

इसके अतिरिक्त, फूलों की तुड़ाई सुबह के समय, सूरज उगने से पहले करना सर्वोत्तम माना जाता है। इस समय का चयन इसलिए महत्वपूर्ण है क्योंकि सुबह के समय वायु में नमी का स्तर अधिक होता है, जिससे फूलों में ताजगी और कोमलता बनी रहती है। सूरज की तेज गर्मी और वाष्पीकरण के बाद फूलों में पानी की कमी हो सकती है, जिससे फूल जल्दी मुरझा सकते हैं। इसीलिए ताजे और सुंदर फूलों को अधिक समय तक बनाए रखने के लिए तुड़ाई सुबह जल्दी करनी चाहिए। इसके अलावा, अब कुछ उच्च तकनीकी विधियों, जैसे कि तापमान और आर्द्रता की सटीक निगरानी, को तुड़ाई प्रक्रिया में जोड़ा जा रहा है, जिससे फूलों की गुणवत्ता बढ़ाई जा सकती है।

यह सुनिश्चित करने के लिए कि फूल अपनी ताजगी और गुणवत्ता को अधिक समय तक बनाए रखें, तुड़ाई के दौरान फूलों की कोमलता का ध्यान रखना भी जरूरी है। तुड़ाई के बाद उन्हें तुरंत सही तापमान पर संग्रहित किया जाता है ताकि वे अधिक समय तक ताजे और आकर्षक बने रहें।

चमेली की फसल की उत्पादकता वैज्ञानिक तकनीकों और आधुनिक कृषि पद्धतियों के माध्यम से एक निश्चित दर से बढ़ती है। पहले वर्ष में, एक एकड़ भूमि से लगभग 600 से 800 किलोग्राम फूल प्राप्त होते हैं। इसके बाद, दूसरे वर्ष में उपज में सुधार होता है और यह बढ़कर 1,400 से 1,500 किलोग्राम तक पहुँच जाती है। तीसरे वर्ष में, चमेली की उपज और अधिक बढ़कर 2,200 से 2,500 किलोग्राम के बीच होती है। चौथे वर्ष के अंत तक, सही खेती तकनीकों और उन्नत सिंचाई प्रणालियों जैसे ड्रिप इरिगेशन और खाद प्रबंधन के कारण, यह उपज लगभग 3,500 किलोग्राम तक पहुँच जाती है। इस उच्च उपज की स्थिति 7 से 8 वर्षों तक स्थिर रहती है, जब तक कि पौधे अपनी पूरी उत्पादकता पर नहीं पहुँच जाते। इसके बाद, समय के साथ उत्पादन में हल्की कमी हो सकती है, लेकिन अगर सही पोषक तत्वों और जलवायु नियंत्रण की प्रणाली लागू की जाए, तो उपज में अधिक समय तक स्थिरता बनाए रखी जा सकती है।

चमेली की किस्में

भारत में लगभग 80 विभिन्न किस्में चमेली की पाई जाती हैं, हालांकि वाणिज्यिक खेती के संदर्भ में तीन प्रमुख किस्मों की खेती की जाती है:

1. जैस्मिनम औरिकुलेटम (**Jasminum auriculatum**) यह एक झाड़ीदार किस्म है, जो पूरे वर्ष भर में फूलों का उत्पादन करती है। मानसून के मौसम में इसके फूलों की संख्या सबसे अधिक होती है। इस किस्म के फूलों से 0.24 प्रतिशत से लेकर 0.42 प्रतिशत तक तेल प्राप्त किया जा सकता है, जो इसके वाणिज्यिक उपयोग को बढ़ाता है। इस किस्म का तेल अपनी विशिष्ट खुशबू और गुणवत्ता के कारण उद्योगों में प्रचलित है।
2. जैस्मिनम सैमबैक (**Jasminum sambac**) यह किस्म विशेष रूप से अपने फूलों की उच्च पैदावार के लिए प्रसिद्ध है। इसे फूलों के उत्पादन के लिए अत्यधिक लाभकारी माना जाता है। इसकी खेती वाणिज्यिक   ष्टिकोण से एक महत्वपूर्ण स्थान रखती है, क्योंकि इसके फूलों की गुणवत्ता और मात्रा दोनों ही अधिक होती हैं। यह किस्म भारत में पूजा और पारंपरिक आयोजनों के लिए भी प्रचलित है, क्योंकि इसके फूलों का धार्मिक और सांस तिक महत्व होता है।
3. जैस्मिनम ग्रांडीफ्लोरम (**Jasminum grandiflorum**)इस किस्म के पौधे आधे बेल जैसे होते हैं, और इनके फूलों का उत्पादन मुख्य रूप से जून से सितंबर के बीच होता है। यह किस्म भी तेल उत्पादन के लिए महत्वपूर्ण है, और इससे 0.24 प्रतिशत से 0.42 प्रतिशत तक तेल निकाला जाता है। इस किस्म का फूल बहुत ही आकर्षक और सुगंधित होता है, जिसे परंपरागत रूप से उपयोग किया जाता है।

इन प्रमुख किस्मों की विशेषताएं और उत्पादकता उन्हें वाणिज्यिक खेती के लिए उपयुक्त बनाती हैं, जो तेल उत्पादन और फूलों के व्यापार में महत्वपूर्ण योगदान करती हैं।

पौध तैयार करना

पौध तैयार करना एक महत्वपूर्ण और बारीकी से की जाने वाली प्रक्रिया है, जिसका उद्देश्य पौधों को नए स्थान पर रोपने के लिए पूर्ण रूप से तैयार करना होता है। चमेली के पौध तैयार करने के लिए हाल ही में कलम कटिंग विधि को सबसे प्रभावी और प्रचलित तरीका माना जाता है। इस विधि में, चमेली के स्वस्थ और ताजे तनों से 4–6 इंच लंबे छोटे हिस्से काटे जाते हैं, जिनमें कम से कम 2–3 नोड्स (अंगूठे) हो। इन हिस्सों को पहले बायोस्टिम्युलेंट्स या हॉर्मोनल पाउडर द्धजैसे इंडोल–3–ब्यूटिरिक एसिड – IBA) में डुबोकर, जड़ों के विकास को प्रोत्साहित किया जाता है। फिर इन्हें उपयुक्त मिट्टी या किसी अन्य जड़न प्रणाली जैसे पेर्लाइट, रेत या कोकोपीट में लगाते हैं। इस प्रक्रिया के लिए जनवरी और फरवरी का समय सर्वोत्तम माना जाता है, क्योंकि इस समय पर्यावरणीय तापमान और आर्द्रता की स्थिति जड़ों के तेजी से विकसित होने के लिए अनुकूल होती है, जिससे पौधों की वृद्धि में सहायता मिलती है। आधुनिक तकनीकों के माध्यम से इस विधि को और भी अधिक कारगर बनाया जा सकता है, जैसे कि कंट्रोल्ड एटीमॉस्फियर में कलम काटने और उन्हें विशेष नमी नियंत्रण कक्षों में रखने से जड़न प्रक्रिया में वृद्धि होती है। यह समय जड़ विकास के लिए अत्यधिक उपयुक्त माना जाता है, क्योंकि जड़ें अधिक तेजी से और स्वस्थ तरीके से विकसित होती हैं।

खेत की तैयारी:

चमेली की खेती में सफलता प्राप्त करने के लिए खेत की उचित तैयारी बेहद महत्वपूर्ण है। इसमें सबसे पहले खेत में 2 से 3 बार गहरी जुताई करना आवश्यक है। यह प्रक्रिया मिट्टी में वायु का उचित संचार सुनिश्चित करती है, जिससे जल निकासी में कोई रुकावट नहीं होती और मिट्टी का स्वास्थ्य भी बेहतर होता है। गहरी जुताई के बाद, खेत में पौधों की बढ़ोतरी के लिए 1.5 मीटर × 1.5 मीटर की उचित दूरी पर गड्ढे खोदने चाहिए। इन गड्ढों का आकार लगभग 30 सेंटीमीटर x 30 सेंटीमीटर होना चाहिए, ताकि पौधों की जड़ें अच्छे से फैल सकें और उनके विकास के लिए पर्याप्त स्थान मिल सके।

गड्ढे खोदने के बाद, प्रत्येक गड्ढे में 10 से 15 किलोग्राम उच्च गुणवत्ता वाली कंपोस्ट खाद और मिट्टी को अच्छे से मिश्रित करके भरना चाहिए। यह प्रक्रिया पौधों को आवश्यक पोषक तत्वों का पर्याप्त योगदान देती है, जिससे वे स्वस्थ और मजबूत होते हैं। इसके बाद, तैयार गड्ढों में चमेली की जड़ निकली हुई कटिंग को रोपित करना चाहिए। कटिंग को गहरे से रोपने से जड़ें जल्दी से मिट्टी में स्थिर होती हैं, और पौधों का विकास जल्दी होता है।

रोपाई के बाद, यह सुनिश्चित करें कि कटिंग को पर्याप्त जल आपूर्ति मिल रही हो। इसके लिए, ड्रिप इरिगेशन जैसी आधुनिक सिंचाई विधि का उपयोग करना सर्वोत्तम रहेगा, क्योंकि यह पानी की बर्बादी को कम करते हुए पौधों को नियमित रूप से जल प्रदान करता है। कटिंग की रोपाई के लिए सबसे उपयुक्त समय जून से अक्टूबर के बीच होता है, क्योंकि इस अवधि में मौसम की स्थिति गर्म और आर्द्र रहती है, जो पौधों के विकास के लिए आदर्श होती है। एक एकड़ खेत में लगभग 1,800 कटिंग की आवश्यकता होती है, ताकि अच्छे उत्पादन की उम्मीद की जा सके, जो किसान की मेहनत और देखभाल पर निर्भर करता है।

खरपतवार नियंत्रण और कटाई–छंटाई

खरपतवार को प्रभावी ढंग से नियंत्रित करने के लिए, पहले निराई को रोपाई के लगभग 3 से 4 सप्ताह बाद करना चाहिए, जब पौधों की जड़ें पूरी तरह से स्थापित हो चुकी होती हैं। इस समय तक जड़ों का विकास काफी अच्छा हो जाता है, जिससे खरपतवार को खत्म करना अधिक प्रभावी और सरल हो जाता है। इस दौरान, रोपाई के आस–पास के क्षेत्र में खरपतवार को हटाने से पौधों के विकास में कोई बाधा नहीं आती है।

इसके बाद, पौधों की कटाई–छंटाई के दौरान यह सुनिश्चित करना चाहिए कि थालों, नालियों और सिंचाई चौनलों को पूरी तरह से साफ किया जाए, ताकि कोई गंदगी, पत्तियां या अन्य अवरोध पानी की आपूर्ति में रुकावट न डालें। इस प्रक्रिया में जल निकासी प्रणाली की सफाई से न केवल पौधों के लिए उचित जल आपूर्ति सुनिश्चित होती है, बल्कि यह भी खरपतवार के विकास को रोकने में मदद करती है।

इसके अलावा, मिट्टी की उर्वरता बनाए रखने के लिए 10 से 15 सेंटीमीटर गहरी खुदाई की जानी चाहिए, जिसमें जैविक खाद और आवश्यक उर्वरक मिलाए जाएं। इससे मिट्टी में पोषक तत्वों की आपूर्ति बढ़ती है, जो पौधों के अच्छे विकास के लिए आवश्यक हैं। इस प्रक्रिया को हर 2 से 3 महीने में दोहराना चाहिए, ताकि पौधों को एक स्वस्थ और समृद्धि वातावरण मिल सके और खरपतवार को प्रभावी रूप से नियंत्रित किया जा सके।

इसके अतिरिक्त, नये तकनीकों जैसे मल्चिंग और पर्यावरण–अनुकूल रासायनिक उपचार का भी इस्तेमाल किया जा सकता है, जो खरपतवार के प्रभाव को और भी कम करते हैं, साथ ही पौधों के विकास को बढ़ावा देते हैं।

चमेली का प्रसंस्करण

चमेली का प्रसंस्करण एक अत्यधिक लाभकारी और आर्थिक दृष्टि से महत्वपूर्ण प्रक्रिया है। यह न केवल किसानों के लिए एक स्थिर और निरंतर आय का स्रोत प्रदान करता है, चमेली के फूलों को प्रोसेस करके विभिन्न प्रकार के उत्पाद जैसे इत्र, तेल, और सौंदर्य प्रसाधन बनाए जा सकते हैं, जो सुगंध और गुणवत्ता के लिए प्रसिद्ध होते हैं। चमेली के तेल की खुशबू बहुत आकर्षक और मनमोहक होती है, इस कारण से इसे मुख्य रूप से इत्र और सौंदर्य प्रसाधनों में एक प्रमुख घटक के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। चमेली के तेल को बनाने की प्रक्रिया विभिन्न तकनीकों के माध्यम से की जाती है।

1. स्टीम डिस्टिलेशन (Steam Distillation): इस प्रक्रिया में सबसे पहले चमेली के ताजे और ताजगी से भरे फूलों को पानी के साथ एक बर्तन में डाला जाता है। फिर, इस मिश्रण को गर्म किया जाता है, जिससे स्टीम द्धवाषत्र्ञ उत्पन्न होती है। इस स्टीम में चमेली का तेल भी मिश्रित होता है। बाद में, इस स्अीम को ठंडा किया जाता है, जिससे तेल और पानी अलग हो जाते हैं। इस प्रक्रिया के माध्यम से, शुद्ध चमेली का तेल प्राप्त होता है।

2. साल्वेंट एक्सट्रेक्शन (Solvent Extraction): इस विधि में चमेली के फूलों को किसी मजबूत साल्वेंट, जैसे अल्कोहल या किसी अन्य तेल, के साथ पूरी तरह से ढक दिया जाता है। इस मिश्रण को 48 घंटे तक अंधेरे और ठंडे स्थान पर छोड़ दिया जाता है, ताकि फूलों से उनका आवश्यक तेल बाहर निकल सके। इसके बाद, फूलों को इस मिश्रण से निकालकर निचोड़ा जाता है, जिससे चमेली का शुद्ध तेल प्राप्त होता है।

चमेली के तेल का उपयोग विभिन्न उत्पादों में किया जाता है:

इसे बनाने में: चमेली के फूलों का उपयोग इत्र बनाने में किया जाता है, क्योंकि इनकी सुखद और मनमोहक खुशबू इत्र को विशेष आकर्षण देती है। चमेली की महक को इस के प्रमुख घटक के रूप में प्रयोग किया जाता है, जिससे इस में एक ऐसी खुशबू पैदा होती है जो न केवल सोंधी होती है, बल्कि बहुत ही मोहक और दिलकश भी होती है। इसके कारण इत्र में चमेली की महक को एक महत्वपूर्ण भूमिका मिलती है, जिससे उसे एक विशिष्ट पहचान और आकर्षण प्राप्त होता है।

सौंदर्य प्रसाधनों में सुगंध के रूप में: चमेली के फूलों का तेल सौंदर्य प्रसाधनों में मुख्य रूप से सुगंध के रूप में उपयोग किया जाता है। यह तेल क्रीम, लोशन, और स्किन केयर उत्पादों में मिलाकर उनकी खुशबू को बढ़ाने का काम करता है। चमेली का तेल एक सुखद, मीठी और नाजुक सुगंध प्रदान करता है, जो इन उत्पादों को इस्तेमाल करते समय एक ताजगी और शांति का अहसास देता है। इसके अतिरिक्त, यह तेल प्राकृतिक तत्वों से समृद्धि होता है, जो त्वचा की देखभाल में सहायक होते हैं।

शैंपू, टॉयलेट साबुन, और अन्य टॉयलेटरीज में: चमेली के फूलों का तेल विभिन्न टॉयलेटरी वस्त्रों जैसे शैंपू, टॉयलेट साबुन और अन्य व्यक्तिगत देखभाल उत्पादों में व्यापक रूप से उपयोग किया जाता है। इसका मुख्य उद्देश्य इन उत्पादों में ताजगी और एक मनमोहक, लाजवाब खुशबू का समावेश करना है। चमेली का तेल इन उत्पादों की खुशबू को लंबे समय तक बनाए रखने में सहायक होता है, जिससे उपयोगकर्ता को ताजगी और सुखद अनुभव का अहसास होता है। इसके अलावा, इस तेल के एंटीसेप्टिक गुण भी होते हैं, जो त्वचा की सुरक्षा और स्वच्छता में मदद करते हैं।

घरेलू क्लीनर और डिटर्जेंट जैसे गैर-कॉस्मेटिक उत्पादों में: चमेली का तेल घरेलू क्लीनर और डिटर्जेंट जैसे गैर-कॉस्मेटिक उत्पादों में भी इस्तेमाल होता है। इन उत्पादों में चमेली के तेल का सम्मिलन उनके प्रभावी सफाई गुणों को बढ़ाता है, साथ ही घर के वातावरण में एक ताजगी और प्राकृतिक खुशबू का संचार भी करता है। चमेली का तेल एक स्वाभाविक एंटीसेप्टिक के रूप में कार्य करता है, जो घरेलू उत्पादों में मौजूद बैक्टीरिया और गंदगी को हटाने में सहायक होता है, जिससे सफाई के बाद घर में न केवल स्वच्छता का अहसास होता है, बल्कि एक सौम्य और मन को लुभाने वाली खुशबू भी महसूस होती है।

चमेली की खेती न केवल आर्थिक दृष्टि से अत्यधिक लाभकारी है, बल्कि इसके फूलों की सुगंध और औषधीय गुण इसे एक अद्वितीय और बहुमूल्य फसल बनाते हैं। चमेली के फूलों का उपयोग पारंपरिक चिकित्सा में विभिन्न प्रकार की बीमारियों के उपचार में किया जाता है, साथ ही इसका उपयोग सौंदर्य प्रसाधन उद्योग में भी किया जाता है। यदि किसान सही कृषि तकनीकों का पालन करें और उचित देखभाल और प्रबंधन करें, तो यह खेती उनके लिए एक उत्कृष्ट और लाभकारी विकल्प बन सकती है। यह न केवल किसानों को उच्च आय प्राप्त करने का अवसर देती है, बल्कि पर्यावरण को भी अनुकूल प्रभाव प्रदान करती है, क्योंकि चमेली के पौधे वायुमंडल में ऑक्सीजन का स्तर बढ़ाने में मदद करते हैं। सही बाजार मूल्य, समय पर फसल की उपज और निरंतर मांग के कारण चमेली की खेती किसानों के लिए आर्थिक समृद्धि का स्रोत बन सकती है।

सटीक कृषि के लिए ड्रोन

इंजि. मंजित, डॉ. भूषण, डॉ.कल्याणी एव इंषि. समिक्षा

भा.क.अनु.प. – प्याज एवं लहसुन अनुसंधान निदेशालय, राजगुरूनगर, पुणे.

इंजि.पुजा

डॉ . बालासाहेब सावंत कोंकण कृषि विश्वविद्यालय, दापोली

पत्राचारकर्ता : manjitkhatal१८@gmail-com

ड्रोन

यूएवी(UAV) यानी मानव रहित हवाई वाहन का इस्तेमाल सटीक कृषि में कई तरह के कार्यों के लिए किया जाता है, जैसे कि रोपण और कीटनाशक का इस्तेमाल, फसल क्षेत्र का विश्लेष्ण और मिट्टी का आकलन। किसान ड्रोन को हाइपरस्पेक्ट्रल, मल्टीस्पेक्ट्रल, थर्मल जैसी कई इमेजजिंग तकनीकों के साथ जोड़कर फसल के स्वास्थय, फंगल संक्रमण, विकास की समस्याओं और अन्य मद्दों के बारे में अस्थायी और साइट–विशिष्ट जानकारी प्राप्त कर सकते हैं।

चचत्र १. सटीक कृषि में ड्रोन का उपयोग

२८ जनवरी २०२२ को, भारत सरकार ने कृषि ड्रोन के लिए एक प्रमाणन कार्यमक्रम भी शुरू किया, जिससे उनहें ड्रोन छिड़काव कार्यों में आमतौर पर इस्तेमाल किए जाने वाले कीटनाशकों और अन्य तरल पदार्थों से रहित पेलोड ले जाने की अनुमति मिल गई। इन समाधानों का छिड़काव करते समय, सभी नियमों और विनियमों का पालन करना सुनिश्चिति करें।

भारत सरकार ने हाल ही में कृषि उद्देश्यों के लिए ड्रोन के उपयोग को प्रोत्साहित करने और किसानों पर श्रम का बोझ कम करने के लिए फार्म मशीनरी प्रशिक्षण और परीक्षण संस्थानों, आईसीएआर संस्थानों, कृषि विज्ञान केंद्रों और राज्य कृषि विश्वविद्यालयों को मार्च 2023 तक 200% सब्सिडी (जो भी कम हो) की पेशकश की है।

ड्रोन की एक सटीक र्कनीक की ओर महत्वपूर्ा संभावनाएँ

१ . फसल निगरानी

ड्रोन द्वारा संचालित NDVI मैपिंग, जो विशेष सैंसर का उपयोग करती है, क्लोरोफिल के स्तर का विश्लेष्ण करने, कीटों, कीटों और बीमारियों का पता लगाने, खरपतवारों की पहचान करने और पौधों के तनाव के स्तर को मापने के लिए अविश्वसनीय रूप से सहायक है। ड्रोन फोटोग्राफी का उपयोग कई दिनों या हफ्तों तक उपज वृद्धि और विकास की सटीक निगरानी के लिए भी किया जा सकता है। उत्पादकता में वद्धि सुनिश्चित करने के लिए, किसान तब समस्याओं का तुरंत समाधान करने और जरूरत पड़ने पर आवश्यक समायोजन करने में सक्षम होते हैं।

फसल निगरानी, बीज बोने से लेकर फसल की कटाई के लिए तैयार होने तक फसल के विकास की निगरानी है। इसमें उर्वरकों के उपयोग का समय, कीटों के संक्रमण पर नजर रखना और मौसम के प्रभाव को ट्रैक करना शामिल है। खेत को स्कैन करने के लिए इनफ्रारेड कैमरों का उपयोग करके, ड्रोन कुशल फसल निगरानी में सहायता कर सकते है। किसान तब पौधों के स्वास्थ्य को बेहतर बनाने के लिए वास्तविक समय में प्राप्त जानकारी पर कार्य कर सकते हैं।

चित्र २. फसल निगरानी के लिए ड्रोन

२ . फसल छिड़काव

कृषि-ड्रोन का उपयोग फसलों पर कीटनाशक, कीटनाशक और शाकनाशी जैसे रसायनों का छिड़काव करने के लिए किया जा सकता है। पारंपरिक तरीकों की तलुना में, उर्वरकों और कीटनाशकों से जल्दी भरा जा सकता है और समय लेने वाला ऑपरेशन है।

चित्र ३. छिड़काव के लिए ड्रोन

३ . मिट्टी की निगरानी

मानव रहित हवाई वाहन (यूएवी) मिट्टी की खुरदरापन, संवेदनशीलता, समग्र गुण और मिट्टी की ताकत जैसे मिट्टी के स्वास्थय मापदंडों से संबंधित डेटा का आकलन करते हैं। यह उत्पादकों को मिट्टी की उर्वरता की स्थिति जानने और अपने खेत में फसल पैटर्न की योजना बनाने में मदद करता है। यह उस क्षेत्र की स्थलाकृति के बारे में भी जानकारी देता है ताकी किसान किसी भी अपरिहार्य स्थिति से पहले निवारक उपाय कर सकें । सटीक कृषि, प्राकृतिक खेती के लिए सामान्य रूप से फसल अभ्यास में ड्रोन तकनीक के उचित उपयोग की आवश्यकता होती है, विशेष रूप से फसल उत्पादकता बढाने और मिट्टी के प्रदूषण को कम करने के लिए मिट्टी की उत्पादकता की स्थिति।

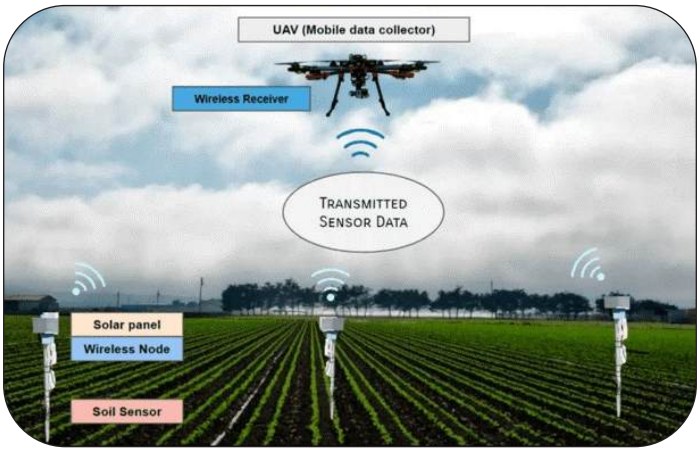

चित्र ४. मृदा निगरानी के लिए ड्रोन

४ . ररमोट सेंलसंग

कृषि ड्रोन की रिमोट सेंसिग क्षमताएं भारी मात्रा में डेटा एकत्र करने में सक्षम बनाती हैं। यह जानकारी, जब उन्नत डेटा एनलिटिक्ट्स के साथ संयुक्त होती है, तो फसल की स्थिति, मृदा स्वास्थय और पर्यावरणीय कारकों के बारे में मूल्यवान जानकारी प्रदान करती है। यह डेटा विश्लेष्ण सूचित निर्णय लेने, रुझानों का पूवोमनुमान लगाने और सटीक कृषि प्रथाओं को लागू करने में सहायता करता है।

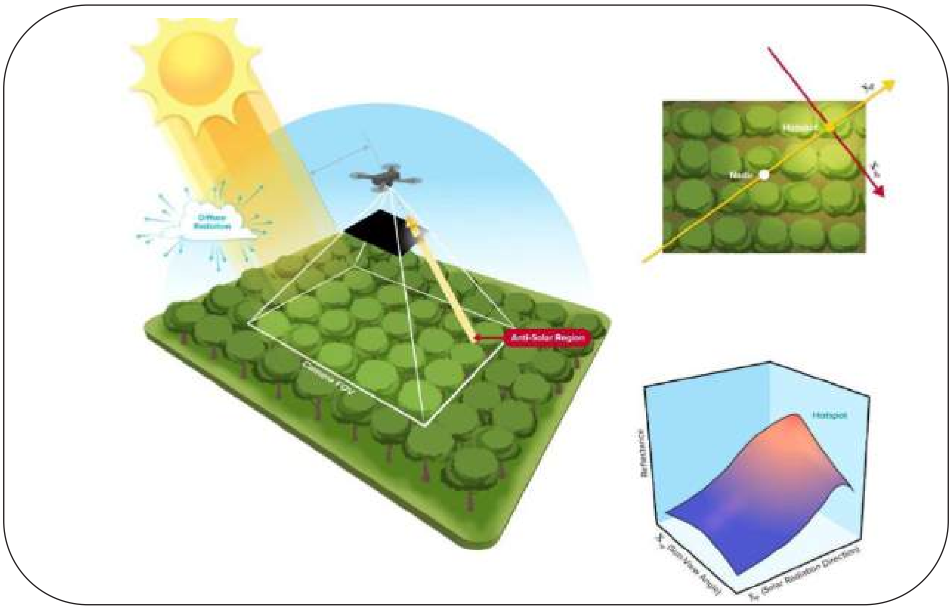

चित्र 5 . रिमोट सेसिंग के लिए ड्रोन

गेंहू के गुलाबी तना छेदक (सिसेमिया इन्फेरेंस, नॉक्टुडी, लेपिडोप्टेरा)कीट का समेकित प्रबंधन किसान भाई कैसे करें

निशा चढ़ार, एम.एससी.(बॉटनी), महाराजा छत्रसाल बुंदेलखंड विशवविद्यालय, शासकीय स्नातकोत्तर उत्कृश्ट महाविद्यालय, टीकमगढ़, मध्य प्रदेश,भारत

डा. द्वारका, पीएच.डी., कीट शास्त्र विभाग, जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय, जबलपुर, मध्य प्रदेश, भारत- 482004

ई-मेल:dwarka@jnkvv.org

सारांश: कीटों के कारण विभिन्न फसल चरणों के दौरान बीज की उपज के साथ-साथ बीज की गुणवत्ता को भी गंभीर नुकसान हुआ है। अनाज पर हमला करने वाले कीटों की विभिन्न प्रजातियों में, स्टेम बोरर सबसे अधिक नुकसानदायक कीट हैं। गुलाबी स्टेम बोरर सिसेमिया इनफेरेंस नेहाल के समय में अनाज में प्रमुख कीट का दर्जा हासिल कर लिया है और यह मृत गोभ, ईयरहेड और उपज के नुकसान में कमी का कारण बनता है। अन्य पौशक पौधे: चावल, मक्का, बाजरा, ज्वार, गन्ना, गेहूँ, और कई घास और कुछ सेज, जैसे, कोइक्स लैक्राइमा-जोबी (जॉब के आँसू), इकाइनोक्लोआकोलोनम (जंगल चावल), पैनिकम रिपेन्स (टारपीडो घास), सेटेरिया पुमिला (पीला फॉक्सटेल) आदि।

जीवन चक्र-

भीतर कई पंक्तियों में समूहों में दिए जाते हैं। अंडेका रंग मलाई दार सफेद और अर्ध-गोलाकार होता है, जो पृष्ठीय सतह पर चपटा होता है। अंडे सेने से पहले यह मलाईदार सफेद से भूरे, राख जैसे भूरे और गुलाबी रंग में बदल जाता है। निषेचित अंडे काले हो जाते हैं, सिकुड़ जाते हैं और विकसित नहीं हो पाते।

लार्वा: नवजात लार्वा पृष्ठीय गुलाबी से बैंगनी गुलाबी रंग के होते हैं, उदर की तरफ हल्के, चिकने और बेलनाकार होते हैं और उनका सिर लाल-भूरे रंग का होता है, जिसे लोकप्रिय रूप से गुलाबी स्टेम बोरर के रूप में जाना जाता है। कीट के पहले चरण के लार्वा अन्य स्टेम बोरर की तुलना में थोड़ेबड़े होते हैं और इसलिए टिलर में छेद करने में कम समय लेते हैं। अंतिम चरण के लार्वा अपना शरीर सिकोड़ लेते हैं और खाना बंद कर देते हैं और12 दिनों के बाद प्यूपा में बदल जाते हैं। लार्वा चरण छह चरणों से गुजरता है। कुल लार्वा अवधि
लगभग 23-39 दिन होती हैं

प्यूपा: प्यूपेशन तने के अंदर या तने और पत्तियों के बीच में होता है। प्यूपा मजबूत और हल्के भूरे रंग के होते हैं, सिर के क्षेत्र पर बैंगनी रंग का रंग होता है। पेट की श्वास नलिकाएं बहुत उभरी हुई होती हैं, जिनमें छेद जैसा छेद होता है और वे थोड़ी उभरी हुई होती हैं। इस अवस्था में बोरर का लिंग आसानी से पहचाना जा सकता है। नर छोटे होते हैं, उनका पेट पतला होता है और जननांगों के सामने दो छोटे उभार होते हैं, जबकि मादाएं बड़ी होती हैं, उनका पेट चौड़ा होता है और उन पर कोई निशान नहीं होता। प्यूपा मोटा और गहरे भूरे रंग का होता है। प्यूपल अवस्था 9-12 दिनों तक चलती है।

वयस्क: पतंगे भूरे रंग के होते हैं, जिन पर बीच-बीच में गहरे भूरे रंग की चौड़ी त्रिकोणीय धारियाँ होती हैं। नर पतंगा मादा से थोड़ा छोटा होता है।नर में पेक्टिनेट एंटीना पाया जाता है और मादा में तंतुमय। वयस्क मादा 6 से 8 दिन तक जीवित रहती है जबकि नर लगभग 4 से 6 दिन तक जीवित रहते हैं। वयस्क नर और मादा क्रमशः 3 से 5 और 5 से 7 दिन तक जीवित रहते हैं। यह 35-57 दिनों में जीवन चक्र पूरा करता है। इस कीट की प्रति वर्ष चार से पांच पीढ़ियाँ हा जाती है।

क्षति की प्रकृति: अंडे से निकलने पर, गुलाबी बोरर लार्वा समूह में पत्ती के आवरण के अंदर या पीछे रहते हैं और पत्ती के आवरण की इपिडर्मल परतपर भोजन करते हैं। सबसे नीचे का पत्ती आवरण गुलाबी बोरर लार्वा का पहला भोजन स्थल था। भोजन के कारण, प्रभावित पत्ती आवरण पर पानीसे लथपथ घावों के साथ चिपचिपा रिसाव दिखाई देता है, जो भोजन के शुरुआती चरणों में बाहर से दिखाई देता था। इसके बाद, लार्वा आवरणों के माध्यम से छेद करके केंद्रीय वृद्धि बिंदु तक पहुँचते हैं। फिर भंवर में बंद पत्तियों पर भोजन करते हैं, जिसके परिणामस्वरूप खुली पत्तियों में समानांतर पंक्तियों में 2-3 मिमी आकार के आयताकार द्धलम्बे या अंडाकार, पिन के आकार से थोड़े बड़ेऋ छेद बनते हैं। जैसे-जैसे पौधा बढ़ता है, य छेद फैलते जाते हैं और दरारें और धारियाँ बन जाती हैं।

गंभीर मामलों में, पत्ती के ब्लेड पर मध्य पसलियों की सुरंग स्पष्ट दिखाई देती है और पौधे उबड़-खाबड़ दिखते हैं। अंकुर के बढ़ते बिंदु पर संक्रमण के कारण अंततः सूखना शुरू हो जाता है, जिसके परिणामस्वरूप अनाज में अंकुरण अवस्था में ष्मृत हृदयष और गेहूं और चावल में बाली अवस्था में ''सफेद बाली'' का निर्माण होता है। तने को अधिकतम नुकसान पहले से पांचवें इंटरनोड के बीच देखा गया। निकास छेद द्धप्रति पौधे 2-5 छेदत्र पाए गए। तने की सुरंगें क्षैतिज हो सकती हैं (कभी-कभी अन्य इंटरनोड्स तक विस्तारित) "एस" आकार की या गोलाकार या ऊर्ध्वाधर। तने में सबसे निचले इंटरनोड्स पर गहरे गोलाकार वलय जैसे कट देखे जा सकते हैं जो मलमूत्र से भरे हो सकते हैं। एक कैटरपिलर से कई पौधे क्षतिग्रस्त हो सकते हैं, क्योंकि लार्वा पुरानी सुरंगों को छोड़ सकते हैं और नई सुरंगें बना सकते हैं।

रोकथाम के उपाय

पता लगाना और निरीक्षण: क्रमशः वनस्पति और पुष्पन अवस्थाओं में डेडहार्ट और व्हाइटहेड की तलाश करें। पत्ती के आवरण और तने के बीच अंडे और तने में फ्रैस, लार्वा और प्यूपा की तलाश करें। 1(स्टेम बढ़ाव के दौरान और 2) पैनिकल विस्तार के दौरान प्रति मी^{2} 1-2 अंडे के द्रव्यमान की सीमा कार्रवाई की गारंटी देगी।

यांत्रिक नियंत्रण: 1.एक प्रकाश जाल प्रति हेक्टेयर लगाएं। 2. हैण्ड डिस्ट्रक्शन।

शि जनित प्रबंधन: सिसेमिया इनफरेंस आमतौर पर अन्य चावल के तने के छेदक कीटों के साथ होता है, जैसे कि चिलो और सरपोफेगा प्रजातियाँ और उन पर लागू किए गए समान उपायों द्वारा नियंत्रित किया जाता है।

रोपण से पहले: हाथ से चुनना व्यावहारिक नहीं है क्योंकि अंडे पत्ती के आवरण और तने के बीच छिपे होते हैं।रोपण के समय पौधे की जोरदार वृद्धि सुनिश्चित करने और पिछली फसल से लार्वा और प्यूपा को नष्ट करने के लिए भूमि को अच्छी तरह से तैयार करें।होने वाले नुकसान की भरपाई के लिए उच्च घनत्व पर पौधे लगाएँ।चावल को गैर-मेजबान फसलों, जैसे कि फलियाँ, के साथ चक्रित करें।

वृद्धि के दौरान: किसी भी क्षेत्र में रोपण को एक साथ करने का प्रयास करें, फसलों को ओवरलैप करने से बचें और कीटों की आबादी को कटी हुई फसलों से खड़ी फसलों में जाने से रोकें। इसके अतिरिक्त, पकने के लिए समान समय वाली किस्में चुनें।यदि फसल मौसमी है, तो जल्दी बोएं। दो जल्दी पकने वाली फसलें एक देर से पकने वाली किस्म की तुलना में कम क्षतिग्रस्त पाई गई हैं। यदि सिंचाई कर रहे हैं, तो पौधे के निचले हिस्सों परअंडे को डुबाने के लिए समय-समय पर पानी का स्तर बढ़ाएँ।अच्छी फसल वृद्धि को बढ़ावा देने के लिए जितनी जल्दी हो सके खरपतवार निकालें। डेडहार्ट वाले तने को काटकर खेत से हटा दें। लार्वा को नष्ट कर दें या डंठल को जला दें। ध्यान दें, यह श्रम गहन है और बहुत प्रभावी नहीं है क्योंकि कीट पहले ही जा चुके होंगे। विभाजित अनुप्रयोगों में नाइट्रोजन उर्वरक लागू करेंरू दरों और समय के लिए स्थानीय अनुशंसाओं की जाँच करें।

कटाई के बाद: फसलों को जमीनी स्तर पर काटें ताकि पराली में मौजूद लार्वा को हटाया जा सके। चावल के बचे हुए पराली को हल से मिट्टी में मिला दें ताकि लार्वा और प्यूपा नष्ट हो जाएँ और बिना काटे पौधों को न छोड़ें। वैकल्पिक रूप से, अगर संभव हो तो खेत की सिंचाई करें। खरपतवार द्धघास और सेजत्र को हटा दें या हल से जोत दें, जो वैकल्पिक मेजबान हो सकते हैं।

प्रा तिक शत्रु: कई शिकारी (जैसे टिड्डे, झींगुर और लेडीबर्ड बीटल) और परजीवी हैं जो गुलाबी तना छेदक पर हमला करते हैं। अंडे के परजीवी टेलीनोमस, टेट्रास्टिकस और ट्राइकोग्रामा सबसे महत्वपूर्ण हैं। ताइवान और फिलीपींस ने टैक्नीड मक्खी, स्टुमिओप्सिस इनफेरेंस को पेश किया है।

रासायनिक प्रबंधन: एक लीटर क्लोरपाइरीफॉस 20 ई.सी. के बुआई से 30, 50 या 70 दिन बाद 2 छिड़काव करें या 7.5 किलोग्राम कारटेप हाइड्रोक्लोराइड 4 जी. या 7.5 किलोग्राम फिप्रोनिल 0.3 जी को 10 किलो सूखी बालू (रेत) में मिलाकर बुआई के 30 व 50 दिन बाद प्रति एकड़ फसल में डालें या प्रोफेनोफॉस 50 ईसी 1-2 मिली प्रति लीटर पानी के हिसाब से छिड़काव करें।

निश्कर्श: गुलाबी तना छेदक एक बहुभक्षी कीट है जो कई अनाज फसलों पर हमला करता है। यह गन्ने की फसल से चावल और फिर अन्य अनाज की फसलों में स्थानांतरित हो जाता है, इसलिए उचित स्वच्छता और जुताई की प्रथाएँ चावल-गेहूँ की बुवाई के मामले में संक्रमण को प्रबंधित करने में मदद करती हैं। एकी त कीट प्रबंधन (आईपीएम) के विभिन्न उपकरणों का उपयोग करना यानी सां तिक नियंत्रण, यांत्रिक नियंत्रण, जैविक नियंत्रण और रासायनिक नियंत्रण अनाज के इस नए उभरते कीट को प्रबंधित करने में मदद कर सकता है।

अमरूद की अतिसघन खेती/ मीडो बागवानी

लेखक:अशोक कुमार , सह-लेखक:ईश्वर सिंह , अंकित कुमार सती
पद:शोधार्थी,ग्रामीण प्रौद्योगिकी विभाग,हेमवती नंदन बहुगुणा गढ़वाल विश्वविद्यालय,श्रीनगर, उत्तराखंड
ईमेल:ashokkumarnduat@gmail.com , eshunegi15023@gmail.com ,ankitsatihnbgu@gmail.com

अमरुद मायर्टेसी परिवार से संबधित एक व्यवसायिक रूप से महत्वपूर्ण फसल है। भारत का विश्व में फल उत्पादन में चीन के बाद द्वितीय स्थान है भारत में विभिन्न अनुसंधान संस्थानों द्वारा किए गए प्रयोगों से सिद्ध हुआ है।किसान बागवानी प्रतिइकाईक्षेत्र फल उत्पादकता बढ़ाने में सक्षम है।किसानों का ध्यान उत्पादन से उत्पादकताए वं लाभ की ओर हुआ है।सघन बागवानी या मीडो प्रणाली के अंतर्गत पौधरोपण कम दूरी पर करते हैं। नए प्रचलन में सघन बागवानी के साथ-साथ पौधों को छोटा कर देने की प्रक्रिया बागवानी में लाभ प्रदान करती है।
पौधों की कैनोपीया आकर में परिवर्तन कर छोटे या बौनी आकार वाले पेड़ के फलों की बागवानी की आधुनिक पद्धति को मीडो बागवानी की संज्ञा दी है।पौधों की कैनोपी में सूर्य की रोशनी का वितरण नई पत्तियां की संख्या में वृद्धि करताहै।यह प्रकाश संश्लेषण की क्रिया को बढ़ावा देता है।जिससे प्रतिइकाई क्षेत्र में उच्च उत्पादन की प्राप्ति होती है।

सघन बागवानी का उद्देश्य उपलब्ध संसाधनों जैसे

भूमि,जल,सौर ऊर्जा और उर्वरकों कान्यायसंगत उपयोग करते हुए फल उत्पादन मेंनियमित और टिकाऊ लाभ प्राप्तकरना है। अमरूद के पौधों लगाने की यह नवीन पद्धति अमरुद उद्योग में उत्पादन एवं श्रमलागत में कमी लाते हुए उत्पादकता बढ़ाना है।

अतिसघनखेती

अतिसघन खेती का अर्थ है कम जगह में अधिक पौधे लगाना ताकि प्रति हेक्टेयर अधिक उत्पादन हो सके।इसमें पौधों के बीच की दूरी कम होती है।औरआधुनिक तकनीकों जैसे छंटाई वसंरक्षित सिंचाई प्रणाली का उपयोग किया जाता है।

मीडोबागवानी

मीडोबागवानी में अमरूद के पौधों को घनीकतारों में लगाया जाता है और पौधों को झाड़ी के रूप में विकसित किया जाता है, जिससे अधिक संख्या में फल लगते हैं।इस तकनीक में उच्च उत्पादन देने वाली किस्मों का चयन और नियंत्रित पोषण प्रबंधन किया जाता है

उपयुक्त किस्में-

बड़े और आकर्षक फलों के लिए उपयुक्त (इलाहाबादी सफेदा), उच्च गुणवता व मीठे के लिए प्रसिद्ध (लखनउ-49), लाल गूदा के फलों के लिए (ललित), निर्यात के लिए ताइवान पिंक, और पूसा सृजन, सघन बागवानी के अंतर्गत निम्न कृषि क्रियाएं करते हैं-

1. पौधों के लिए रेखांकन करना।
2. गड्ढे खोदना।
3. गड्ढों का मिश्रण तैयार करना ।
4. गड्ढों को भरना।
5. पौधरोपण पौधों को निश्चित ऊंचाई पर निश्चित अंतराल पर काटना।
6. 3-4 मुख्य शाखाएं रखना।
7. नई शाखाओं की तीन - चार माह बाद कटाई करना।
8. द्वितीय वर्ष पून: कटाई करना।
9. दो वर्ष पश्चात वर्ष में दो बार कटाई -छटाई करना (जनवरी- फरवरी या मई - जून माह)

विभिन्न पौधरोपण दूरी पर संस्तुत पौधों की संख्या प्रति है-

3.0 मी. पंक्ति से पंक्ति ग 1.5 मी. पौधे से पौधा - 2222 पौधे/हेक्टेयर।

3.0 मी. पंक्ति से पंक्ति ग 3.0 मी. पौधे से पौधा - 1111 पौधे/है।

6.0 मी. पंक्ति से पंक्ति ग 3 मी. पौधे से पौधा - 555 पौधे/है।

परंपरागत दूरी 6.0 मी. पंक्ति से पंक्ति ग 6.0 मी. पौधे से पौधा - 278 पौधे/है।

जलवायु एवं भूमि-

उष्ण कटिबंधीय तथा उपोष्ण कटिबंधीय क्षेत्र वाला फल है। अमरूद को लगभग हर प्रकार की भूमि में उगाया जा सकता है। तथा उसर तथा रेतीली भूमियों के लिए बहुत अच्छा वृक्ष है। परंतु गुणवतापूर्ण उत्पादन के लिए उपजाउ बालू दोमट भूमि अच्छी रहती है।

इलाहाबाद सफेदा, पूसा सृजन, हिसार सुर्ख,श्वेता, ललित, लखनउ 49, पंत प्रभात, अर्का मृदुला, अर्का अमूल्य, **CISH G - 1 , 2, MPUAT selection - 1,2 2**

पौधरोपण –

मई– जून माह में 0.6 ग 0.6 ग 0.6 सेंटीमीटर आकर के गड्ढे खोदकर तैयार करते हैं। गड्ढों का आकार छोटा रखते हैं गड्ढों को 15 से 20 दिन तक खुला रखते हैं। सड़ा हुआ गोबर की खाद 30 किलोग्राम, 50 ग्राम (कीटनाशक चूर्ण) क्यूनालफास, 1.5 % कीटनाशक चूर्ण का, 500 से 1000 ग्राम नीम की खली, 1.0 किलोग्राम सिंगल सुपरफास्ट, 5 किलोग्राम जिप्सम प्रति गड्ढा मिश्रण तैयार करते हैं।

मुख्य तने से 60 सेंटीमीटर ऊंचाई पर काटा जाता है। इस ऊंचाई पर तीन चार शाखों को बढ़ाने दिया जाता है। इसके बाद नई शाखांए निकालने के बाद लगभग तीन–चार दिन माह बाद उसमें पुनः कटाई करते है। पुनः एक बार तीन चार माह बाद कटाई करते है। द्वितीय वर्ष पुणे में दो बार कटाई छटाई करते है। अमरूद में फूड तथा फल नई वृद्धि पर ही लगते हैं। तीसरे वर्ष जनवरी तथा मैं जून में फल प्राप्त करने के आधार पर कटाई करते हैं।

खाद एवं उर्वरक प्रबंधन –

वर्षा ऋतु की फसल लेने के लिए **FYM,SSP,MOP** की पूरी मात्रा तथा यूरिया की आधी मात्रा दिसंबर माह में तथा शेष मात्रा मार्च अप्रैल में देनी चाहिए सर्दी की फसल के लिए **FYM, SSP,MOP** की पूरी मात्रा तथा यूरिया की आधी मात्रा जून माह में तथा शेष मात्रा सितंबर माह में देनी चाहिए ऋतु की फसल में कीट रोगों का संक्रमण कम लगता है।

पंतनगर विश्ववविद्यालय में किए गए परीक्षणों के आधार पर निम्न तालिका के आधार पर पौधों को खाद एवं उर्वरक दिए जाने चाहिए –

पौधों की आयु (वर्ष)	गोबर की खाद (किग्रा.)	नाइट्रोजन (ग्रा.)	फास्फोरस (ग्रा.)	पोटाश (ग्रा.)
1	10	75	65	50
2	20	150	130	100
3	30	225	195	150
4	40	300	260	200
5	50	375	325	250
6 वर्ष और अधिक	60	450	400	300

उपज-

यद्यपि 3 वर्ष में अमरूद के पेड़ों से सामान्यतः 75 से 100 फल प्रति पेड मिलना शुरू हो जाता है। तथा 6 वर्ष पश्चात अमरूद के पूर्ण विकसित पेड़ से वर्ष भर में 100-125 किलो ग्राम प्रति पेड़ तक उपज मिल जाती है। शरद ऋतु में अमरूद के फलों को अखबार के कागज में लपेटकर या लकड़ी की पेटी में भरकर दूर के बाजारों में भेजकर अधिक लाभ कमाया जा सकता है।

निष्कर्ष-

अमरूद की अतिसघन खेती (मीडो बागवानी) किसानों के लिए एक क्रांतिकारी तकनीक है।इससे कम समय में अधिक उत्पादन और मुनाफा संभव है।यदि वैज्ञानिक तरीकों को अपनाया जाए, तो यह भारत में फलों की खेती का भविष्य बन सकता है।

1st year

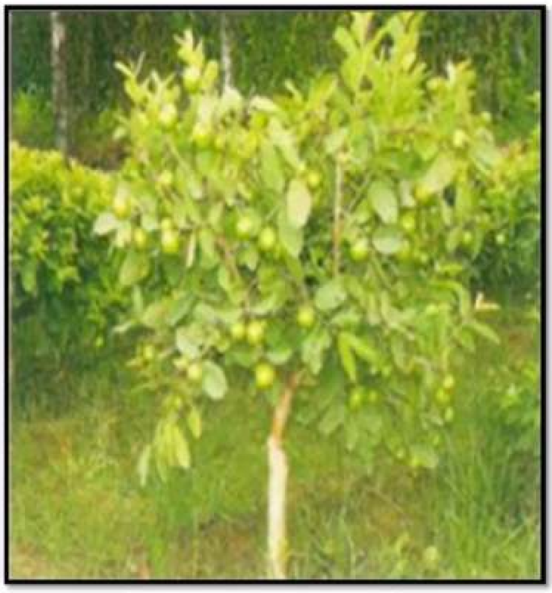

2nd year

सन्दर्भ-

कृषि विज्ञान कें द्रवन स्थली विद्यापीठ टोंक 304022।

कृषि विज्ञान के नगीना बिजनौर।

एचपी शिवा परियोजना उद्यान विभाग नवबहार, शिमला-171002 हिमाचल प्रदेश।

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (ICAR) - "अमरूद उत्पादन तकनीक", राष्ट्रीय बागवानी अनुसंधान एवं विकास प्रतिष्ठान। नेशनलहॉर्टिकल्चरबोर्ड (NHB) - अमरूद की खेती पर विस्तृत मार्गदर्शिका।

डॉ. एस. के. सिंहएवंटीम - "अतिसघन खेती प्रणाली: एक नवीन तम दृष्टिकोण", भारतीय बागवानी पत्रिका, 2022।

के.वी.के. (कृषि विज्ञान केंद्र) रिपोर्ट - अमरूद की उच्च घनत्व वाली खेती पर फील्ड परीक्षण रिपोर्ट।

केंद्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान| लखनऊ उत्तर प्रदेश।

शुष्क क्षेत्रों में लघु एवं सीमांत –कृषकों के लिए लाभप्रद व्यवसाय -कमलम उत्पादन

सौरभ सिंह, डॉ आनंद सिंह, डॉ बिजेन्द्र कुमार सिंह
(1. शोध छात्र, फल विज्ञान विभाग, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, अयोध्या)
(2. फल विज्ञान विभाग, बाँदा कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, बाँदा)
ईमेल – shrinetsaurabh04@gmail.com

परिचय

कमलम, जिसे अंग्रेजी में ''**Dragon Fruit**'' भी कहते हैं, एक रंगीन और आकर्षक फल है जो एक विशेष प्रकार के कैक्टस पौधे **(Cactus plant)** के फल से प्राप्त होता है। यह फल प्राकृतिक रूप से दक्षिण एशिया के कुछ भागों, मेक्सिको, और दक्षिण अमेरिका में पाया जाता है। आमतौर पर यह फल उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में पैदा होता है।कमलम फल खाने में स्वादिष्ट, गुणकारी और पौष्टिक होता है।इसमें पोषक तत्वों, विटामिन्स (विटामिन सी, विटामिनबी, विटामिन ए), एंटीऑक्सिडेंट्स और फाइबर होता है, जो शरीर के लिए फायदे मंद होते हैं। यह फल एक विशेष प्रकार के कैक्टस पौधे पर उगता है और इसके फलों का आकार बड़ा होता है। यह फल अस्तित्व में गुलाबी, लाल, पीला और सफेद जैसे विभिन्न रंगों में पाया जा सकता है। इसका स्वाद मीठा और उपयुक्त ताजगी के साथ होता है।भारत में कमलम फल की मांग बढ़ने के साथ ही किसानों द्वारा इसकी खेती भी तेजी से बढ़ती गयी। गुजरात, उत्तरप्रदेश, मध्य प्रदेश, केरल, तमिलनाडु, कर्नाटक, पश्चिमबंगाल, राजस्थान और महाराष्ट्र में तेजी से कमलम फल की खेती की जा रही है।कमलम हिलोकेरस अनडाटस **(Hylocereus undatus)** केक्टेसी **(Cactaceae)** कुल से सम्बंधित है यह फल संतरा, आम, पपीता, केला, सेब आदि की तुलना में अधिक पौष्टिक और फायदेमंद है।

कमलमफल के प्रति १०० ग्राम फल में पाए जाने वाले प्रमुख पोषक तत्व

पानी	87g
कैलोरी	60 K cal
कार्बोहइड्रेट	13 g
प्रोटीन	1.1 g
वसा	0.4 g
फाइबर	3 g
विटामिनसी	20.5 mg
लोहा	1.90 mg
फॉस्फोरस	22.5 mg
कैल्शियम	8.5 mg

उपयोग

कमलम फल का उपयोग जैम बनाने, जेली बनाने, फेसपैक, और वाइन बनाने के लिए किया जाता है।कमलम का उपयोग आप सलाद के रूप में भी कर सकते हैं।

इसका उपयोग मुरब्बे के रूप में भी किया जा सकता है। इसका जूस या शेक बनाकर भी इसका सेवन किया जा सकता है।

कमलम फल के कुछ औषधीय गुण

कैंसर रोधी व इम्युनिटी बढाने में कारगर है

डेंगू मरीजों के लिए फायदेमंद है

मानव शरीर में रक्त बढाने में सहायक होता है

इसके सेवन से पाचन शक्ति बढ़ती है

इसके सेवन से गठिया या अर्थराइटिस में भी आराम मिलता है

उपयुक्त जलवायु

कमलम की खेती के लिए उष्णकटिबंधीय जलवायु की स्थिति बेहतर होती है।आर्द्र जलवायु से फलों की गुणवत्ता प्रभावित होती है इसके पौधे कम उपजाऊ मिट्टी और उचित तापमान में होने वाले लगातार परिवर्तन के बीच भी जीवित रह सकते हैं। इसके लिए 50-75 सेंटीमीटर औसत वार्षिक वर्षा पर्याप्त होती है तथा 25-32°c तापमान इसके लिए उपयुक्त माना जाता है।कमलम की फसल के लिए तेजधूप की ज़रूरत नहीं होती है इसलिए इसकी फसल को तेज धूप से बचाने के लिए छाया का इस्तेमाल किया जाता है। बांदा कृषि विश्वविद्यालय में इसकी खेती की जा रही है जहां इसे तेज़ धूप से बचाने हेतु पौधों को पतले कपड़े या तिरपाल से ढककर गर्मी से बचाया जाता है।

मिट्टी व खेत की तैयारी

कमलम को विभिन्न प्रकार की मृदाओं में उगाया जा सकता है परन्तु अच्छे जल निकास वाली बलुहा दोमट मिट्टी उत्तम होती है। फलों की गुणवत्ता एवं रंगभारी मृदाओं की अपेक्षा हल्की मृदाओं में अच्छा होता है कमलम फल की खेती के लिए मिट्टी का च्भ् 5.5 से 7 तक उपयुक्त माना जाता है। खेत को अच्छी तरह जोतकर समतल बनाना चाहिए ताकि मिट्टी में मौजूद सारे खरपतवार खत्म हो जाएं। जुताई के बाद कोई भी जैविक कम्पोस्ट अनुपातानुसार मिट्टी में दिया जाना चाहिए। एक हेक्टेयर जमीन में 70 से 80टन अच्छी सड़ी हुई खाद अच्छे से बिखेर कर मिट्टी में मिला दें।बाँदा एवं इसके पास के इलाको में चिकनी मिट्टी पायी जाती है किन्तु बांदा कृषि विश्वविद्यालय में हो रहा इसका उत्पादन दिखाता है कि यह फल इस मिट्टी में भी अच्छा उत्पाद देकर किसानों के आय में वृद्धि प्रदान कर सकता है।

किस्मे

कमलम फल की 3 मुख्य किस्मे हैं

1)सफ़ेद पिताया **(White dragon fruit)**

2)लाल पिताया **(Red dragon fruit)**

3)पीला पिताया **(Yellow dragon fruit)**

प्रवर्धन

कमलम फल का प्रवर्धन मुख्यत: तना कलम के द्वारा होता है, 15 से 20 सेंटीमीटर के लम्बे तने के टुकड़ों का प्रयोग नए पौधों को बनाने हेतु किया जाता है।बीज के द्वारा भी इसकी बुआई की जा सकती है परन्तु बीज से पौधे तैयार होने में समय लगता है और परपरागित होने के कारण वांछित गुणों को लेकर भी दुविधा रहती है। इसलिए बीज से तैयार पौधों को व्यवसायिक खेती के अनुकूल नहीं माना जाता है। तना कलम को खेत में लगाने से एक दो दिन पहले ही काट लेते है।

बुआ की विधि

यदि टपक सिचाई की सुविधा उपलब्ध है तो मेड़ की ऊंचाई 30.45 सेंटीमीटर और चौड़ाई 50.60 सेंटीमीटर रखना उचित होता हैद्य समतल भूमि पर पौधे लगाने हेतु 60से. मी ग 60से. मी. ग 60से. मी. आकर के गड्ढे ग्रीष्म काल में खोद लेते हैं जिन्हें खाद के साथ भरकर पौधे लगाते हैं। कमलम के पौधों के लिए अच्छी वृद्धि, विकास और गुणवत्तायुक्त उत्पादन के लिए सहारे की आवश्यकता होती है जिसके लिए जमीन से 6 फिट ऊँची मजबूतल कड़ी या कंक्रीट के पोल तैयार कर लेते हैं। इस संरचना के शीर्ष पर 30 से 45 से. मी. की दो या चार भुजाएं बना लेते हैं जिससे T छाते के आकर की संरचना में पौधों को विकसित किया जा सके।इन्हें पंक्ति से पंक्ति हेतु 3.4मी. और पौधों से पौंधो हेतु 2मी. की दुरी पर लगाते हैं।

सिंचाई

अन्य फसल की तुलना में कमलम को काफी कम पानी की आवश्यकता होती है।भूमि में अधिक नमी इसके उत्पादन के लिए अत्यंत हानिकारक होती है, अधिक नमी से कली और फल झड़ने लगते हैं। रोपा के तुरंत बाद पानी दे फिर एक सप्ताह उपरांत सिचाई करें गर्मी के दिनों में आवश्यकता अनुसार सिचाई करेंद्य कमलम की सिचाई के लिए ड्रिप सिचाई सबसे उपयुक्त रहती है।

खाद एवं उर्वरक

कमलम फल के प्रत्येक पौधे के लिए 10 से 12किलो जैविक खाद डालना चाहिए और हर साल 2 किलो जैविक उर्वरक डालना चाहिए।कमलम के समुचित विकास के लिए रासायनिक खाद की भी ज़रूरत पड़ती है। वानस्पतिक अवस्था में इसमें लगने वाली रासायनिक खाद यूरिया:एसएसपी: एमओपी 70:90:40 ग्राम पर पौधे डालें। फल देने के बाद कम मात्रा में नाइट्रोजन अधिक मात्रा में पोटाश लगाना चाहिए ताकि उपज बेहतर हो।फूल आने से लेकर फल आने तक यानि की फूल आने से ठीक पहले (अप्रैल माह), फल आने के समय (जुलाई –अगस्त) और फल को तोड़ने के दौरान (दिसम्बर माह) तक इस अनुपात में रासायनिक खाद दिया जाना चाहिए, यूरिया: एसएसपी: एमओपी 50:50:100 प्रति पौधा डालें। रासायनिक खाद प्रत्येक वर्ष 220 ग्राम बढ़ाया जाना चाहिए जिसे बढ़ाकर 1.5 किलो तक किया जा सकता है।

कीट एवं बीमारी

सामान्यत: कमलम फल में कीट एवं बीमारी का प्रकोप कम होता है फिर भी इसमें एंथ्रेक्नोज रोग व थ्रिप्स कीट का प्रकोप देखा गया है। एंथ्रेक्नोज रोग के नियंत्रण के लिए मैन्कोजेव दवा के घोल का 0.25 प्रतिशत की दर से छिड़काव करें।थ्रिप्स के लिए इमिडाक्लोप्रिड का 0.1 प्रतिशत की दर से छिड़काव करना चाहिए।

उपज एवं लाभ

कमलम एक सीजन में 4.5 बार फल देता है प्रतिफल का वजन लगभग 400.800 ग्राम होता है। एक पोलपर 50से 120 तक फल लगते है जिसका वजन 18 से 32किलो तक होता है। कमलम बाज़ार में 200से 250रू0 प्रति किलो दाम मिलने पर लागत काटकर 5.7 लाख तक का शुद्ध लाभ प्रति एकड़ प्राप्त होता है।

उत्तराखंड में वन उत्पादों के माध्यम से ग्रामीण अर्थव्यवस्था का संवर्धन

नरेश सिंह और अतुल कुमार

वानिकी महाविद्यालय, रानीचौरी, टिहरी गढ़वाल, उत्तराखंड

ईमेल – tariyalsonu12@gmail.com

परिचय

उत्तराखंड, जिसे देवभूमि के नाम से भी जाना जाता है, प्राकृतिक संसाधनों से भरपूर एक पहाड़ी राज्य है। यहाँ के घने वन और जैव विविधता स्थानीय ग्रामीण अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। राज्य के अधिकांश लोग कृषि, पशुपालन, और वनों पर निर्भर रहते हैं। वन उत्पादों का सतत उपयोग एवं व्यापार ग्रामीण लोगों के जीवन स्तर को सुधार सकता है और आत्मनिर्भरता को बढ़ावा दे सकता है।

उत्तराखंड के वनों की स्थिति

उत्तराखंड का लगभग 45% भाग वनों से आच्छादित है। यहाँ के वनों में चीड़, देवदार, बुरांश, साल, और बाँज जैसे महत्वपूर्ण वृक्ष पाए जाते हैं। इनसे प्राप्त होने वाले विभिन्न उत्पादों का स्थानीय स्तर पर उपयोग किया जाता है, जिससे ग्रामीण लोगों को रोजगार और आजीविका प्राप्त होती है।

मुख्य वन उत्पाद और उनका आर्थिक महत्व

उत्तराखंड के ग्रामीण क्षेत्रों में वनों से अनेक प्रकार के उत्पाद प्राप्त होते हैं, जो सीधे या परोक्ष रूप से ग्रामीण अर्थव्यवस्था को सशक्त बनाते हैं।

1.औषधीय पौधे एवं जड़ी-बूटियाँ:

- उत्तराखंड की जलवायु जड़ी-बूटियों के लिए अत्यधिक अनुकूल है।
- अश्वगंधा, गिलोय, कटुकी, तेजपात, और कुटकी जैसी जड़ी-बूटियाँ औषधीय महत्त्व रखती हैं।
- इनका व्यावसायिक उपयोग ग्रामीणों को आय का प्रमुख स्रोत प्रदान करता है।

2.गैर-काष्ठ वन उत्पाद (NTFPs):

- रेजिन, गोंद, शहद, लाह, और लाख प्रमुख गैर-काष्ठ वन उत्पाद हैं।
- ये उत्पाद हस्तशिल्प और छोटे उद्योगों में प्रयुक्त होते हैं, जो ग्रामीण लोगों के लिए रोजगार के अवसर उपलब्ध कराते हैं।

3.फल-फूल एवं जैविक उत्पाद:

- काफल, हिसालू, किन्गोड़, बुरांश आदि स्थानीय फल ग्रामीण अर्थव्यवस्था में योगदान देते हैं।
- बुरांश के फूलों से रस और अन्य उत्पाद तैयार किए जाते हैं, जिनकी मांग बढ़ रही है।
- ऑर्गेनिक खेती और प्राकृतिक उत्पादों के प्रति बढ़ती रुचि ने ग्रामीण उत्पादों की बाजार में मांग को बढ़ा दिया है।

4.लकड़ी और बाँस उद्योग:

- लकड़ी और बाँस से फर्नीचर, टोकरियाँ, हस्तशिल्प और घरेलू उपयोग की वस्तुएँ बनाई जाती हैं।
- उत्तराखंड के कुछ क्षेत्रों में बाँस आधारित कुटीर उद्योग विकसित किए जा रहे हैं।

5.शहद उत्पादन:

- मधुमक्खी पालन (एपीकल्चर) से उच्च गुणवत्ता वाला शहद प्राप्त किया जाता है।
- उत्तराखंड में जैविक शहद की मांग बढ़ी है, जिससे ग्रामीण किसानों को अधिक आय प्राप्त हो रही है।

वन उत्पादों के सतत प्रबंधन की आवश्यकता

वन उत्पादों के अंधाधुंध दोहन से पर्यावरणीय असंतुलन की समस्या उत्पन्न हो सकती है। अतः इनके सतत प्रबंधन के लिए निम्नलिखित उपाय अपनाए जाने चाहिए:

•**सामुदायिक वन प्रबंधन:** ग्रामीण समुदायों को वन संरक्षण और उनके सतत उपयोग में भागीदार बनाना।

•**जैव विविधता संरक्षण:** दुर्लभ जड़ी-बूटियों और वनस्पतियों का वैज्ञानिक तरीकों से संरक्षण।

•**स्थानीय उद्योगों का प्रोत्साहन:** ग्रामीण क्षेत्रों में छोटे-छोटे वन उत्पाद आधारित उद्योगों को बढ़ावा देना।

•**प्रशिक्षण एवं जागरूकता:** ग्रामीण लोगों को वन उत्पादों के सतत उपयोग और व्यावसायिक अवसरों के बारे में जागरूक करना।

सरकार एवं गैर-सरकारी संगठनों की भूमिका

उत्तराखंड सरकार और विभिन्न गैर-सरकारी संगठन (NGOs) ग्रामीणों को वन उत्पादों के उपयोग से आर्थिक रूप से सशक्त बनाने के लिए कई योजनाएँ चला रहे हैं। कुछ प्रमुख योजनाएँ निम्नलिखित हैं:

•**राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन (NRLM):** ग्रामीण महिलाओं और किसानों को स्वरोजगार से जोड़ने के लिए विभिन्न योजनाएँ चलाई जा रही हैं।

•**वन धन योजना:** इस योजना के तहत ग्रामीणों को गैर-काष्ठ वन उत्पादों के व्यापार हेतु सहायता प्रदान की जाती है।

•**हर्बल गार्डन और औषधीय खेती:** राज्य में कई स्थानों पर औषधीय पौधों की खेती को बढ़ावा दिया जा रहा है।

•**स्थानीय बाजारों का विकास:** ग्रामीण उत्पादों को बाजार में उचित मूल्य दिलाने के लिए विभिन्न पहल की जा रही हैं।

चुनौतियाँ और समाधान

वन उत्पाद आधारित ग्रामीण अर्थव्यवस्था को विकसित करने में कई चुनौतियाँ भी हैं, जिनमें प्रमुख हैं:

•**अत्यधिक दोहन और संसाधनों की कमी:** अनियंत्रित दोहन से प्राकृतिक संसाधनों की कमी हो सकती है।

•**बिचौलियों का प्रभाव:** वन उत्पादों का उचित मूल्य ग्रामीणों को नहीं मिल पाता।

•**आधुनिक तकनीक की कमी:** वैज्ञानिक विधियों की जानकारी और तकनीकी संसाधनों की उपलब्धता सीमित है।

•**मौसम और जलवायु परिवर्तन:** बदलते जलवायु पैटर्न से वन उत्पादों की उपलब्धता प्रभावित होती है।

समाधान:

•**स्थायी कृषि और वन प्रबंधन नीतियाँ अपनाना।**

•**वन उत्पाद आधारित सहकारी समितियों का गठन करना।**

•**जैविक प्रमाणन और ब्रांडिंग को बढ़ावा देना।**

•**डिजिटल प्लेटफार्मों के माध्यम से ग्रामीण उत्पादों को ऑनलाइन बाजारों तक पहुँचाना।**

निष्कर्ष

वन उत्पाद उत्तराखंड की ग्रामीण अर्थव्यवस्था को नई ऊँचाइयों तक ले जा सकते हैं। यदि इनका सतत एवं व्यवस्थित उपयोग किया जाए तो न केवल ग्रामीणों की आय में वृद्धि होगी, बल्कि राज्य की समग्र अर्थव्यवस्था भी सशक्त होगी। सरकारी योजनाओं, सामुदायिक प्रयासों और आधुनिक तकनीकों के समावेश से यह संभव है कि उत्तराखंड के वन उत्पाद वैश्विक बाजार में अपनी पहचान बना सकें। इस दिशा में ठोस कदम उठाने से उत्तराखंड के ग्रामीण क्षेत्रों में सतत विकास सुनिश्चित किया जा सकता है।

पर्णपातीफलदार पेड़ों में कटाई छटाई: उद्देश्य, सिद्धांत एवं लाभ

डॉक्टर धर्मपाल
विषय विशेषज्ञ, उप उष्ण कटिबंधीय फल केंद्र लाडवा, कुरुक्षेत्र
(इंडो-इजराइल परियोजना), उद्यान विभाग, हरियाणा
ईमेल : dharampalsagwal3238@gmail.com

पर्णपातीफलदार फसलों में कटाई-छंटाई की क्रिया करना, पौधे की वृद्धि एवं विकास के साथ-साथ वांछितआकर प्राप्त करने तथा बीमारी एवं कीट नियंत्रण करने में मुख्य भूमिका निभाता है।

इसके अलावा कटाई-छटाई बागवानी फसलों में फलों की पैदावार एवं गुणवत्ता बढ़ाने में भी सहायता करती है। अगर फलदार पौधों में यह क्रिया नहीं की जाती है, तो वह पौधे जंगली पौधों की तरह बढ़ने लग जाते हैं तथा उन पर निम्न आकार एवं गुणवत्ता के फल लगते हैं। सभी फलदार पौधों में कटाई-छटाई की क्रिया करने की आवश्यकता नहीं होती, जैसा की केला, अनानास, पपीता आदि के पौधों को सामान्य रूप से बढ़ने दिया जाता है। लेकिन लगभग सभी पर्णपाती फलदार फसलों जैसे सेब, आड़ू, आलू बुखारा, नाशपाती, अंगूर आदि में उच्च गुणवत्ता का उत्पादन प्राप्त करने के लिए नियमित रूप से कटाई-छटाई की क्रिया करने की आवश्यकता होती है।

उद्देश्य:

- फलदार पौधों में जड़ों तक सूर्य के प्रकाश को पहुंचना
- पौधे के आकार, आकृति एवं स्वरूप को नियंत्रित करना
- पौधों का मजबूत और खुला ढांचा तैयार करना
- पौधों में हवा तथा सूर्य के प्रकाश को एक समान वितरण करना
- पौधों में फलदार शाखों में वृद्धि को उत्तेजित करना
- पौधों में कीटनाशक के छिड़काव व फल तूड़ाई को आसान बनाना
- अनावश्यक रोग ग्रसित व टूटी हुई टहनियों को पौधों से अलग करना
- पुराने पौधों का जीर्णोद्धार करना
- फल उत्पादन क्षेत्र में वृद्धि करना
- सकन कलियों एवं फलों के वरलीकरण द्वारा उत्पादित फलों के आकार को बढ़ाना

प्रमुख विधियां:

- पिचिंग या डिसबडिंग
- वलयन
- पतला करना
- वापस लौटना

पंचिंग या डिस बडिंग:
पौधे की शाखों के ऊपरी सिरे से दो से तीन पत्तियों के साथ तोड़ने की क्रिया को पंचिंग कहते हैं तथा जब नई काली को हटाया जाता है उसे दिस बडिंग कहते हैं

वलयन
पौधे की डाली या तने से एक से डेढ़ सेंटीमीटर लंबाई की छाल वलय: के रूप में हटाए जाने को वलयन कहते हैं

पतला करना:
इस विधि में पार्श्व शाखाओं को काटकर या पूरी तरह हटाकर टर्मिनल शाखाओं को बढ़ाया जाता है इस तरह कमजोर शाखाओं को पतला करने से ऊंचाई बढ़ जाती है और पौधे को बेहतर प्रकाश व हवा ग्रहण करने के लिए खुला छोड़ दिया जाता है

वापस लौटना :
पौधे के अंतिम भाग से एक तिहाई या आधे हिस्से को काटने या हटाने की क्रिया को वापस लौटना कहते हैं, इस प्रकार शीर्ष की बढ़वार रुकने से पास कर कलियां विकसित होती हैं

कटाई छंटाई के सिद्धांत:

मृतरोग ग्रस्त सैनियों को हटाना: कटाई छंटाई की क्रिया में मृतऔर रोग ग्रस्त टहनियों को हटाया जाता है, जिससे पौधे के स्वास्थ्य में समग्र विकास को बढ़ावा मिलने के साथ-साथ बीमारियों के फैलने का जोखिम कम होता है।

आकार और संरचना नियंत्रण: कटाई छंटाई द्वारा पौधे के आकार व संरचना को नियंत्रित करके वांछित सौंदर्यीकरण व समुचित विकास किया जा सकता है। इससे पौधे को संतुलित हवा एवं प्रकाश प्राप्त करने में सहायता मिलती है।

नई वृद्धि को प्रोत्साहित करना: कटाई-छंटाई से नई टहनियां तथा शाखों के विकास को बढ़ावा मिलता है। इस क्रिया में पौधे के कुछ हिस्से हटाने से नई पत्तियां के विकास को जोरदार ऊर्जा मिलती है, जिससे उत्पादकता एवं पौधे की जीवन शक्ति में वृद्धि होती है।

आकार एवं घनत्व को नियंत्रित करना:कटाई-छंटाई विधि द्वारा पौधे के आकार को नियंत्रित करने के साथ-साथ पौधे के अंदर पर्याप्त हवा तथा प्रकाश के संरक्षण को सुनिश्चित किया जाता है।

फूल फल उत्पादन बढ़ाना: रणनीतिकार कटाई-छंटाई करके पौधे की ऊर्जा प्रजनन शाखों की ओर निर्देशित की जाती है, जिससे फूल-फल उत्पादन को बढ़ावा मिलता है।

सावधानियां:
पौधों की कटाई-छंटाई के समय निम्नलिखित सावधानियां का ध्यान रखना अति आवश्यक है

कटाई छंटाई के समय उचित दिशा निर्देशों का पालन करना: फलदार पौधों की कटाई छंटाई के समय उचित दिशा निर्देशों का पालन करते हुए पौधों की प्रजाति के अनुसार उचित छंटाई तकनीक का प्रयोग करना चाहिए, क्योंकि अनुचित या अत्यधिक कटाई-छटाई करने से पौधों का विकास रुकने या नष्ट होने का खतरा बना रहता है।

समय सारणी का ध्यान रखना: फलदार पौधों की कटाई-छंटाई करते समय समय सारणी का ध्यान रखना अति आवश्यक है, क्योंकि कुछ फलदार फैसले किसी विशेष मौसम में कटाई-छंटाई के प्रति संवेदनशील होते हैं तथा अनुचित समय पर की गई कटाई-छंटाई क्रिया से पौधों को नुकसान पहुंच सकता है, जिससे भविष्य में पौधों का कम फूल आने जैसी समस्या का सामना करना पड़ सकता है।

प्राकृतिक स्वरूप पर प्रभाव: कटाई-छंटाई के समय सावधानी नए बरतने से पौधों की प्राकृतिक रूप पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है और हम पौधों से वंचित सौंदर्य परिणाम से वंचित रहे सकते हैं।

इसलिए पर्णपाती फलदार पौधोंकीकटाई-छंटाई करना महत्वपूर्ण उद्यान क्रिया है। अतः फलदार पौधों का अच्छा एवं वंचित ढांचा तथा उचित गुणवत्ता वाला अधिक उत्पादन प्राप्त करने के लिए पौधों की उचित कटाई-छंटाई सावधानी पूर्वक एवं दिशा निर्देशानुसार करना अति आवश्यक है।

सरसों: भारत की एक महत्वपूर्ण तिलहनी फसल

पुष्पेंद्र कुमार मिश्रा , आदर्श डंगवाल
गोविंद बल्लभ पंत विश्वविद्यालय, पंतनगर
ई-मेल - **pkm09235931@gmail.com**

परिचय

भारत में तिलहन फसलों का महत्वपूर्ण स्थान है, और सरसों उनमें प्रमुख भूमिका निभाती है। सरसों (Brassica spp.) मुख्य रूप से खाद्य तेल उत्पादन के लिए उगाई जाती है और भारतीय किसानों की आजीविका में इसका बड़ा योगदान है। यह रबी मौसम की प्रमुख फसल है, जो मुख्य रूप से उत्तर भारत, पंजाब, हरियाणा, राजस्थान, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, बिहार और पश्चिम बंगाल में उगाई जाती है।

सरसों की प्रजातियाँ

सरसों की कई प्रमुख प्रजातियाँ हैं, जिनका उत्पादन जलवायु और क्षेत्र के आधार पर भिन्न होता है:

१.भारतीय सरसों (Brassica juncea) – यह सबसे अधिक उगाई जाने वाली प्रजाति है, जिसमें तेल की मात्रा अधिक होती है।

२.पीली सरसों (Brassica rapa var. yellow sarson) – मुख्य रूप से उत्तर-पूर्वी भारत में उगाई जाती है और मसाले के रूप में भी इस्तेमाल होती है।

३.तोरी (Brassica rapa var. toria) – यह जल्दी पकने वाली प्रजाति है, जो बिहार, पश्चिम बंगाल और असम में लोकप्रिय है।

४.रायडा (Brassica carinata) – यह मुख्य रूप से राजस्थान और गुजरात में उगाई जाती है।

५.गोल सरसों (Brassica nigra) – इसका उपयोग मुख्य रूप से मसाले के रूप में किया जाता है।

जलवायु एवं मिट्टी

सरसों की खेती ठंडी जलवायु में अधिक उपयुक्त होती है। यह 10-25 डिग्री सेल्सियस तापमान पर अच्छी तरह बढ़ती है। अधिक नमी या पाला इस फसल को नुकसान पहुँचा सकता है।

सरसों के लिए दोमट और जलोढ़ मिट्टी सर्वोत्तम मानी जाती है, जिसमें जलनिकासी की अच्छी सुविधा हो। अम्लीय और क्षारीय मिट्टी में इसका उत्पादन कम हो जाता है।

खेती की विधि

सरसों की खेती के लिए निम्नलिखित चरण महत्वपूर्ण हैं:

- **बुवाई का समय** – अक्टूबर से नवंबर
- **बीज की मात्रा** – 4-6 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर
- **खाद एवं उर्वरक** – 80-100 किग्रा नाइट्रोजन, 40-50 किग्रा फास्फोरस और 20-30 किग्रा सल्फर प्रति हेक्टेयर उपयुक्त होता है।
- **सिंचाई** – 2-3 सिंचाइयाँ आवश्यक होती हैं, पहली सिंचाई 30-35 दिनों के बाद और दूसरी फूल आने के समय करनी चाहिए।
- **निराई-गुड़ाई** – खरपतवार नियंत्रण के लिए समय-समय पर निराई-गुड़ाई आवश्यक होती है।

कीट एवं रोग नियंत्रण

सरसों की फसल को विभिन्न कीट एवं रोग प्रभावित कर सकते हैं, जिनका उचित प्रबंधन आवश्यक है:

1.कीट –

- एफिड (लाही)
- तना छेदक
- फली छेदक

नियंत्रण: जैविक कीटनाशकों या नीम तेल का छिड़काव लाभकारी हो सकता है।

2.रोग –

- सफेद रतुआ
- अल्टरनेरिया ब्लाइट
- स्क्लेरोटिनिया रॉट

नियंत्रण: फफूंदनाशकों का छिड़काव और संतुलित उर्वरक प्रबंधन आवश्यक होता है।

उपयोग एवं आर्थिक महत्व

१.खाद्य तेल उत्पादन – सरसों के बीजों से निकाला गया तेल भारत में एक लोकप्रिय खाद्य तेल है।

२.खली (पशु आहार) – तेल निकालने के बाद बची खली पशुओं के लिए पोषक चारे के रूप में उपयोग होती है।

३.मसाला – पीली सरसों के बीजों का उपयोग भारतीय व्यंजनों में मसाले के रूप में किया जाता है।

१.औषधीय महत्व – सरसों का तेल पारंपरिक चिकित्सा में सिरदर्द, त्वचा रोगों और मांसपेशियों की समस्याओं में उपयोग किया जाता है।

सरसों उत्पादन की चुनौतियाँ एवं समाधान

सरसों उत्पादन में कुछ प्रमुख समस्याएँ देखी जाती हैं, जैसे:

•जलवायु परिवर्तन के कारण पैदावार में अस्थिरता।

•कीट और रोगों का बढ़ता प्रभाव।

•परंपरागत खेती के कारण कम उत्पादन।

समाधान: वैज्ञानिक कृषि पद्धतियों, उन्नत किस्मों के बीजों, जैविक खेती और बेहतर जल प्रबंधन तकनीकों को अपनाने से उत्पादन बढ़ाया जा सकता है।

निष्कर्ष

सरसों भारतीय कृषि की एक महत्वपूर्ण फसल है, जो किसानों की आजीविका और देश की खाद्य तेल आवश्यकताओं को पूरा करने में सहायक है। उन्नत कृषि तकनीकों और टिकाऊ खेती को अपनाकर सरसों उत्पादन में और वृद्धि की जा सकती है।

संदर्भ (References):

१.भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (ICAR): भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (ICAR) द्वारा प्रकाशित सरसों से संबंधित विभिन्न रिपोर्ट और अध्ययन इस फसल की कृषि पद्धतियों, रोग-कीट नियंत्रण, और उत्पादन तकनीकों के बारे में विस्तार से जानकारी प्रदान करते हैं।

२.कृषि विश्वविद्यालयों और संस्थानों द्वारा शोध पत्र: जैसे, पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, और अन्य क्षेत्रीय कृषि संस्थान सरसों के उत्पादन पर निरंतर शोध कर रहे हैं और नए तकनीकी उपायों पर मार्गदर्शन प्रदान करते हैं।

३.कृषि मंत्रालय, भारत सरकार: भारत सरकार के कृषि मंत्रालय द्वारा जारी किए गए कृषि सांख्यिकी आंकड़े और रिपोर्टों में सरसों की खेती से संबंधित डेटा और आर्थिक जानकारी मिलती है।

४.देशी कृषि प्रकाशन: "कृषि संसार" और "कृषि जागरण" जैसी हिंदी कृषि पत्रिकाएं सरसों की खेती से संबंधित उन्नत तकनीकों, बीज प्रजातियों, और रोग नियंत्रण उपायों पर जानकारी प्रकाशित करती हैं।

5."भारतीय तिलहन फसलें" (Indian Oilseed Crops) - किताबें और जर्नल: तिलहन फसलों, विशेषकर सरसों के विभिन्न पहलुओं, जैसे कि उत्पादन, उर्वरक प्रबंधन, और जलवायु पर आधारित शोध और केस स्टडी में यह किताबें सहायक होती हैं।

संरक्षण कृषि : भूमि स्वास्थय और सुरक्षा की दिशा में एक नई पहल

उमेश कुमार[1a], अभिषेक कुमार सिंह[2] एविं अनिल कुमार1[b]
[1]शोध छात्र, मृदा विज्ञान विभाग, सरदार वल्लभभाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, मेरठ, (उ.प्र.).
[2]शोध छात्र, शस्य विज्ञान विभाग, सरदार वल्लभभाइ पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, मेरठ, (उ.प्र.).
ईमेल : umeshkumar180500@gmail-com

परिचय

संरक्षण कृषि, एक विशेष अनुप्रयोग जिसमें खेती के सिद्धांतों को समर्थन करता है, उत्पादकता को बढाने और भूमि को स्वस्थ रखने का एक प्रणाली है। भारत में पिछले कई वर्षों में शून्य जुताई (जीरो टीलेज) और संरक्षण कृषि को अपनाने से लगभग 1.5 मिलियन हेक्टेयर कृषि भूमि का विस्तार हुआ है। संरक्षण कृषि अपनाने से फसल की गहनता , गन्ना, दालों, सब्जियों आदि की रिले कृषि॰ गेहूँ और मक्का के साथ अंतः फसल आधारित गहनता और विविधता हेतु आवश्यक विविधकृत मार्ग भी प्रशस्त होता है। संरक्षण कृषि आधारित संसाधन संरक्षण प्रौद्योगिकियाँ निम्न और उच्च क्षमता वाले वातावरण दोनों में फसल, पशुधन, भूमि और जल प्रबंधन अनुसंधान को एकीकृत करने में सहायता करती हैं। कई राज्यों के कृषि विश्वविद्यालयों, भारतीय कृषि एवं अनुसंधान परिष्द के संस्थानों तथा भारत के गंगध के मैदान के लिये धान–गेहूँ कंसोर्टियम के संयुक्त प्रयधसों के माध्यम से संरक्षण कृषि के विकास और प्रसार के प्रयास किये जा रहे हैं। संरक्षण कृषि संसाधनों की गिरावट तथा कृषि की लागत को कम करते हुए कृषि दक्षता में वृद्धि करने, प्रतिस्पर्धा को बढाने और कृषि को धारणीय बनाने का अवसर प्रदान करती है। अतः 'संसाधनों का संरक्षण–उत्पादकता में वृद्धि ' संरक्षण कृषि का नया उद्देश्य होना चाहिये।

संरक्षण कृषि क्या है?

संरक्षण कृषि (सीए) एक कृषि प्रणाली है जो खराब भूमि को पुनजीर्वित करते हुए कृषि योग्य भूमि के नुकसान को रोक सकती है। यह स्थायी मृदा आवरण के रखरखाव, न्यूनतम मृदा गड़बड़ी और पौधों की प्रजातियों के विविधीकरण को बढावा देता है। यह जमीन की सतह के ऊपर और नीचे जैविक विविधता और प्राकृतिक जैविक प्रक्रियाओं को बढाता है,जो पानी और पोषक तत्वों के उपयोग की दक्षता बढाने और बेहतर और निरंतर फसल उत्पादन में योगदान देता है। इसमें भूमि की सुरक्षा, प्रदूषण कमी, और जल संचार की दृष्टि से खेती की जाती है, जिससे उत्पादकता बढती है। संरक्षण कृषि एक कृषि प्रणाली है, जिसके अंर्तगथतः

- फसल अपनी सुरक्षा हेतु मृदा का एक स्थायी आवरण बनाए रखती है।
- मृदा की जुताई से बचा जा सकता है।
- विभिन्न प्रजातियों के पौधों की खेती,
- मृदा की स्थिति में सुधार
- भूमि के क्षरण को कम करने तथा
- जल और पोषक तत्वों के उपयोग की दक्षता में वृद्धि शामिल है।

संरक्षण कृषि के मृख्य लाभ:

इसके माध्यम से भूमि सवास्थ्य में सुधार होता है, पानी की बचत होती है, और किसानों को अधिक आय मिलती है।

- मृदा की गुणवत्ता,जैसे– भौषतक, रासायनिक और जैविक स्थिति आदि में वृद्धि।
- यह दीर्घकाल में कार्बनिक मृदा के निर्माण में कार्बन प्रच्छादन और ग्रीन हाउस गैसों के उतसर्जन तथा जलवायु परिवर्तन से संबंधित बदलावों के लिये उत्पादन प्रणाली में अधिक लचीलापन लाने के लिये व्यावहारिक रणनीति प्रदान करती है।
- खरपतवारों जैसे– गेहूँ में गेहूँसा (phalaris minor) के प्रसार में कमी।
- मृदा की जल और पोषक तत्तवों को ग्रहण करने की क्षमता में वृद्धि।
- फसल अवशेषों को जलाने में आने वाली कमी से पोषक तत्तवों की हानि और पर्यावरण प्रदूषण में कमी आती है, जिससे स्वास्थय संबंधी गंभीर खतरे कम हो जाते हैं।
- यह फसल के गहनी करण और विविधिकरण के अवसर उपलब्ध कराती है।

विभिन्न संरक्षण कृषि तंत्र:

चित्रण, खेतों की तैयारी, और बुआई से लेकर सीधे बुआई, बुआई के दौरान सुरक्षा के लिए विभिन्न तंत्रों को बताया गया है

- मृदा एवं जल संरक्षण
- मिट्टी का आवरण (पलवार)
- विविध फसल चक्र
- संस्कृति और पर्यावरण संरक्षण

उर्ज संरक्षण

मृदा एवं जल संरक्षण:

मृदा और जल संरक्षण का महत्वपूर्ण हिस्सा है, क्योंकि ये प्राकृतिक संसाधन हैं जो हमारे जीवन को सुरक्षित रखने में मदद करते हैं। वन्यजीव संरक्षण और जल संरक्षण के लिए शुद्ध और स्वास्थ्य मृदा की आवश्यकता है। कृषि और उद्यानिकी में उच्च उत्पादकता के लिए मृदा का सही से प्रबंधन करना महत्वपूर्ण है। वृक्षारोपण से मृदा की आर्थिक सुरक्षा बढ़ती है और वायुमंडलीय प्रदूषण को कम करती है। वृष्टि जल संचारण की प्रणालियों का अनुसरण करके जल संग्रहण का सही तरीके से कार्य करना चाहिए। जल संवर्धन के लिए जल संचारण सुविधाएं विकसित करनी चाहिए और लोगों को जल संरक्षण की जागरूकता देनी चाहिए। जल संचारण और उपयोग को निगरानी में रखना, प्रदूषण को नियंत्रित करना महम्वपूर्ण है।

मिट्टी का आवरण (पलवार) : मल्चिंग कृषि में एक महत्वपूर्ण तकनीक है जिसका उपयोग मिट्टी को सुरक्षित रखने और पौधों को समृद्धि प्रदान करने के लिए किया जाता है। इसमें विभिन्न सामग्रीयों का उपयोग किया जा सकता है, जैसे कि स्ट्रॉ, मल, बार्क, या पास्टिका मल्चिंग से मिट्टी को ठंडी रखने के साथ-साथ उसमें पानी की भंडारण क्षमता भी बढ़ती है,
जिससे पौधें को आवश्यक आर्थिक और पोषण सामग्री प्रदान होती है। यह भी बीमारियों और खरपतवारों के खिलाफ एक प्रकार की सुरक्षा प्रदान करता है।

विविध फसल चक्र: विविध फसल चक्र संरक्षण कृषि का एक महत्वूर्ण पहलु है जो कृषि क्षेत्र में पर्यावरण संरक्षण के लिए अहम है। इसमें विभिन्न प्रकार की फसलें एक समय पर एक ही खेत में बोई जाती है और फिर यह चक्र बार-बार पुनरावृत्ति के साथ आगे बढ़ता है। यह चक्र सृजनात्मक जल संचार, मिट्टी स्वास्थ्य, और फसल सुरक्षा को बढ़ावा देने का एक तरीका है। विविध फसल चक्र का उदाहरण देखने के लिए, पहले साल में एक फसल की बोए जाती है, फिर दूसरे साल में एकअलग फसल की बुआई होती है, और इसी प्रकार सबसे अलग साल कई तरह की फसलें बोई जाती हैं। इस प्रकार का चक्र समृद्धि, जल संरक्षण, और उर्वरक संतुलन की दृष्टि से बेहतर कृषि प्रणालियों को प्रोत्साहित करता है।

संस्कृति और प्रर्यावरण संरक्षण:

संस्कृति और पर्यावरण संरक्षण कृषि में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है। यह एक ऐसी कृषि प्रणाली है जो पर्यावरण सुरक्षा को प्रमोट करने का प्रयास करती है और संस्कृति के साथ गहरे संबंध को साधती है। संरक्षण कृषि में सीनीय संस्कृति का समर्थन किया जाताहै , जिससे लोगों को अपने पंरपरागत ज्ञान कासमर्थन करने का अवसर मिलता है। यह सही देखभाल की ओर प्रेरित करती है। यह प्रणाली बायो-डाइवर्सिटी को बढ़ावा देती है और स्थानीय जीवन का संरक्षण करती है,
जिससे भूमि और प्रदेश की बेहतर स्थिति होती है। संरक्षण कृषि में स्थानिय कृषि परंपराओं का समर्थन करने के माध्यम से, समृद्धि और स्थायिता को बढ़ावा मिलता है जो स्थानीय सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक मूल्यों की सुरक्षा में मदद करता है।

उर्जा संरक्षण: उर्जा संरक्षण, संरक्षण कृषि में महत्वपूर्ण भमिका निभाता है जो एक सुस्तख सुस्त और समृद्धि की दिशा में प्रणाली को प्रोत्साहित करता है। संरक्षण कृषि में सुस्ती और सुस्त उपकरणों का उपयोग किया जाता
है जिससे उर्जा की बचत होती है। इससे दी जाने वाली उर्जा की खपता कम होती है और विशेषकर बीज बोने जाने वाले क्षेत्रों में यह एक महत्वपूर्ण योगदान करता है। उर्जा संरक्षण के माध्यम से वृष्टि जल संचार सिस्टम को सुस्त और संवेदनशील बनाया जा सकता है। यह पौधें को सही मात्रा में पानी प्रदान करने के लिए उचित तकनीकी सुनिश्चित करता है और अबाली जल से बचत करता है। संरक्षण कृषि में उर्जा संरक्षण के माध्यम से सही बीज औ उर्वरक का उपयोग करके खेती की जा सकती है, जिससे अत्यधिक उर्जा की खपत रोकी जा सकती है। सुस्ती की दृष्टि से कृषि ऑपरेशन जैसे की खेती, बुआई में उर्जा का सुस्त उपयोग किया जा सकता है जिससे किसानों को लाभ होता है।

संरक्षण कृषि की चुनौतियाँ और समाधान:

विभिन्न प्रौद्योगिकियों और किसानों की सहायता से उत्पन्न होने वाली चुनॉतिया एवं समाधान का विवेचना किया गया है।

चनौतियाँ :

- मौसम अनियमितता
- कृषि तकनीकी का अनुसरण
- बीज संग्रहण और उपयोग
- प्रदूषण और उपयोगिता की संरक्षण

समाधान

- तकनीकी तथा वैज्ञानिक जागरूकता
- जल संचार और सही बुआई तकनीकी
- बीज संरक्षण
- जैव संरक्षण बी बढ़ावा

भविष्य की दिशा में संरक्षण कृषि का योगदान

- प्रदूषण मिटाना
- जल संरक्षण
- उर्जा सुरक्षा
- बायोडाइवर्सिटी का समर्थन
- जलवायु परिवर्तन से लडना
- आर्थिक समृद्धि

कृषि व्यवसाय में डिजिटलाइजेशन का प्रभाव

दिव्या बंगारी
कुमाऊँ यूनिवर्स्टी , नैनीताल,उत्तराखण्ड
ईमेल - divya27bangari@gmail.com

प्रस्तावना

डिजिटल युग ने विश्वभर के उघोगों में क्रांतिकारी परिवर्तनकिए हैं, और कृषि व्यवसाय भी इससे अछूता नहीं रहा। डिजिटलाइजेशन के आगमन से खेती, विपणन वित्तिय लेन देन और आपूर्ति श्रृंखला में कई सुधार हुए हैं। विशेष रुप से भारत जैसे कृषि प्रधान देश में, जहाँ बडी आबादी कृषि पर निर्भर है,डिजिटल साधनों ने किसानों को नई अवसर प्रदान की हैं।

भारत सरकार भी इस बदलाव को बढावा देने के लिए विभिन्न योजनाएँ और पहल चला रही है। हालाँकी, डिजिटलाइजेशन के कुछ नकारात्मक प्रभाव और जोखिम भी हैं। डिजिटलाइजेशन का असर किसानों और ग्रामीण समुदायों की जीवनशैली परिवर्तन आए हैं। यह लेख डिजिटलाइजेशन का कृषि व्यवसाय पर प्रभाव को विस्तृत रुप से संबोधित करता है।

डिजिटलाइजेशन क्या है ?

डिजिटलीकरण वह परिक्रिया है जिसमें डिजिटल तकनीकों का इस्तेमाल करके व्यवसाय संचालन,सेंवाओ या गतिविधियों को बदला जाता है। इसमें डिजिटल टूल, स्वचालना और डेटा आधारित रणनीतियों को अपनाकर कार्यक्षमता में सुधार किया जाता है, ग्राहक अनुभव को बेहतर बनाया जाता है और नए अवसर उत्पन किए जाते हैं।

कृषि व्यवसाय पर डिजिटलाइजेशन का प्रभाव

डिजिटल तकनीकों के बढते उपयोग ने कृषि व्यवसाय के विभिन्न पहलुओं को प्रभावित किया है। डिजिटल तकनीकों के बढते उपयोगे ने किसानो को बेहतर निर्णय लेने ,उत्पादन लागत को कम करने,अधिक लाभ प्राप्त करनेए और वैश्विक बाजार तक पहुँचने में मदद की है। पहले जहां सूचना और संसाधनों की उपलब्धता सीमित थी, वही अब इंटरनेट मोबाइल ऐप्स, कृषि बुद्धिमता और बिग डेटा जैसी तकनींको के कारण किसान सटीक जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। डिजिटल तकनीक केवल खेती तक सीमित नही है, बल्कि इससे कृषि उत्पादों का विपणन और व्यापार भी प्रभावित हुआ है किसान अब ऑनलाइन प्लेटफार्म पर अपनें उत्पादो को बेच सकते हैं, जिससे उन्हें बिचौलियों पर निर्भर नहीं रहना पडता है और फसल का सही मूल्य मिल पाता है। साथ ही, डिजिटल भुगतान प्रणाली के कारण वित्तीय लेन देन अधिक पारदर्शी और सुरक्षित हुआ है, जिससे नकदी संकट की समस्या कम हुई है। हालाँकी, डिजिटल तकनीकों के इस बढते प्रभाव के साथ कुछ चुनौतियों भी सामने आई हैं, जैसे डिजिटल साक्षता की कमी, इंटरनेट कनेक्टिविटी की समस्याएँ आदी।कृषि व्यवसाय परडिजिटलाइजेशन के प्रभाव निम्नलिखित हैं--

1. कृषि उत्पादन में वृदि और दक्षता

डिजिटल तकनीकों ने कृषि उत्पादन को अधिक वैज्ञानिक और कुशल बना दिया है। ड्रोन, सेंसर, सैटेलाइट इमेंजिंग , और स्मार्ट सिंचाई प्रणालियों के उपयोग से जल, उर्वरक और कीटनाशकों का सही मात्रा में उपयोग संभव हो पा रहा है। इससे न केवल उत्पादन की मात्रा और गुणवत्ता में सुधार हुआ है,बल्कि संसाधनों का अनावश्यक अपव्यय भी रुका है।

2. केवल विपणन में सुधार

परंपरिक कृषि बाजारों में किसानों को अपनी उपज बेचने के लिए बिचौलियों पर निर्भर नहीं रहना पडता है और फसल का सही मूल्य मिल पाता है। लेकिन अब डिजिटल कृषि बाजार और ई-कॉमर्स प्लेटफॉर्म के माध्यम से किसान अपनी उपलज को सीधे व्यापारियों और उपभोकताओं तक पहुँचा सकते हैं। इससे उनकी आय में वृदि हुई है और फसल बिक्री की प्रकिया अधिक पारदर्शी और लाभकारी हो गई है।

3. वित्तीय लेन देन और डिजिटल भुगतान प्रणाली

डिजिटलीकरण के कारण ऑनलाइन बैंकिंग, मोबाइल वॉलेट और यूपीआई आधारित भुगतान प्रणालियों कृषि क्षेत्र में व्यापक रुप से अपनाई जा रही है। इससे किसानों के लिए वित्तीय लेन देन आसान, तेज और सुरक्षित हो गए हैं। नकद लेन देन की तुलना में डिजिटल भुगतान अाधिक पारदर्शी और सुविधाजनक हैं, जिससे किसानों को आथिक रुप से अधिक मजबूती मिल रही है

4. आपूर्ती श्रृंखला और लॉजिस्टिकस में सुधार

डिजिटल ट्रैकिंग, कोल्ड स्टोरेज नेटवर्क, एनालिटिक्स और परिवहन प्रबंधन की मदद से कृषि उत्पादों को बाजार तक पहुँचानेकी प्रक्रिया अधिक तेज, संगठित और कुशल हो गई है। इससे फेसल की बर्बादी कम हो रही है और किसानों को अधिक लाभमिल रहा है। उपभोकताओं को भी बेहतर गुणवता वाले और ताजा उत्पाद प्राप्त हो रहे हैं।

डिजिटीलीकरण में सरकारी योजनाएँ

भारत सरकार कृषि क्षेत्र में डिजिटलाइजेशन को बढावा देने के लिए विभिन्न योजनाएँ और पहल चला रही है। इनका उदेश्यकिसानों को डिजिटल तकनीकों , स्मार्ट कृषि समाधानों, आनलाइन बाजारों और वितीय समावेशन से जोडना है।

राष्टीय कृषि बाजार (e-NAM)

यह एक डिजिटल प्लेटफॉर्म है जो किसानों को देशभर की मंडियों से जोडता है। यह प्लेटफॉर्म किसानों को अपनी फसल को ऑनलाइन बेचने की सुवीधा देता है। डिजिटल बोली और ऑनलाइन भुगतान प्रणाली के कारण लेन देन अधिक पारदर्शी और सरल हो गया है।

एग्री क्लीनिक्स और एग्री बिजनेस सेंटर्स योजना

यह योजना कृषि स्नातकों को ऐसे उघम स्थापित करने के लिए प्रोतसाहित करती है। जो किसानों को व्यवसायिक सलाह और सेवाँए प्रदान करती है। इसके तहत प्रशिक्षण, वित्तीय सहायता और ऋण सुविधाएँ दी जाती हैं।

डिजिटल एग्रीकल्चर मिशन

यह मिशन आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस, मशीन लर्निंग, इंटरनेट ऑफ थिंग्स और ब्लॉकचेन जैसी उन्नत तकनीकों को कृषि क्षेत्र में लागू करने के लिए शुरु किया गया है। इसका उदेश्य कृषि कार्यों को अधिक कुशल और डेटा आधारित बनना है। जिससे किसानों को सटीक जानकारी और संसाधनों का सही उपयोग करने में मदद मिले।

राष्ट्रीय ई गवर्नेंस योजना इन एग्रीकल्चर

इस योजना का उदेश्य डिजिटल तकनीकों को अपनाने के लिए राज्यों को वित्तीय सहायता प्रदान करना है। यह योजना किसानो को स्मार्टफोन , मोबाइल ऐप्स और ऑनलाइन पोर्टल्स के माध्यम से कृषि संबंधी सूचनाएँ , बाजार मूल्य और सरकारी योजनाओं की जानकारी देती है।

कृषि व्यवसाय में डिजिटलाइजेशन के नकारात्मक प्रभाव और चुनौतियाँ

डिजिटलाइजेशन ने जहाँ सकारात्मक कृषि व्यवसाय पर सकारात्मक प्रभाव डालें है। वही इसके कई नकारात्मक प्रभाव भी डालें है। इसके कारण कई चुनौतियाँ सामने आइ हैं। य चुनौतियाँ मुख्य रुप से तकनीकी, सामाजिक आर्थिक और संरचनात्मक स्तर पर देखी जा सकती हैं।

1. डिजिटल विभाजन

डिजिटल विभाजन का अर्थ है कि समाज के कुछ हिस्सों को डिजिटल तकनीकों का पूरा लाभ नहीं मिल पाता,जबकी कुछ लोग इसका पूरी तरह से उपयोग कर सकते हैं। भारत में कई ग्रामीण इलाकों में सीमित इंटरनेट और मोबाइल कनेक्टिविटी , तकनीकी शिक्षा की कमी ,महंगे उपकरणों की कमी के कारण छोटे और सीमांत किसान डिजिटल कृषि उपकरणों और ऑनलाइन बाजारों का पूरा लाभ नहीं उठा पाते। इन समस्याओं का समाधान सस्ते स्मार्टफोन और इंटरनेट सेवाओं को बढावा देकर, किसानों को डिजिटल साक्षरता का प्रशिक्षण उपलब्ध कराकर, ग्रामीण क्षेत्रों में डिजिटल इनफ्रास्ट्रक्चर में करके किया जा सकता है।

2. गलत जानकारी और डिजिटल साक्षरता की कमी

डिजिटल माध्यमों से घोखाधड़ी जैसे गलत निवेश योजनाएँ साइबर फाड के कइ लोग शिकार बन जाते है। डिजिटल मार्केटिंगप्लेटफॉर्म्स में पारदर्शिता की कमी जिससे किसानों को गुमराह करके उन्हें उनकी फसल के उचित मूल्य नहीं मिल पातें। किसानों की नीजी जानकारी और वित्तीय डेटा का गलत उपयोग होने का खतरा बढ गया है। इन चुनौतियों का सामना किसानो और उपभोकताओं को डिजिटल साक्षरता और डेटा विश्रलेषण का प्रशिक्षण देकर, सरकारी और निजी डिजिटल प्लेटफॉर्म्स के लिए गुणवत्ता मानक बनाकर किया जा सकता है।

3. रोजगार की हानि और श्रमिक संकट

ऑटोमेशन और आधुनिक तकनीको के बढते उपयोग से कृषि व्यवसाय में बेरोजगारी बढ रही है। ऑटोमेशन और आधुनिकतकनीको को संचालित करने के लिए कुशल लोगों की आवश्यकता होती है।जिसके कारण ग्रामीण पलायन की समस्या बढ सकती हैं।

4. डिजिटल मोनोपॉली और बाजार नियंत्रण

बडी टेक कंपनियाँ और ई. कॉमर्स प्लेटफॉर्म्स र्कषि व्यापार पर हावी हो सकती है जिससे छोटे व्यापारी और पारंपरिक कृषि बाजार प्रभावित हो सकते है। स्थानीय और छांटे डिजिटल व्यापारियों को बढावा देने की नितियाँ बनाकर तथा ई कॉमर्स प्लेटफॉर्म्स में पारदर्शिता सुनिश्रत करके की जा सकती है।

निष्कर्ष

डिजिटलाइजेशन ने कृषि व्यवसाय को अधिक कुशल, पारदर्शी और लाभदायक बना दिया है। ई नाम आनलाइन माकेटप्लेस,डिजिटल भुगतान प्रणाली, आपूर्ती श्रृंखला प्रबंधन जैसी तकनीकों ने कृषि उत्पादों की बिक्री और वित्तीय लेन देन को आसानबनाया है। अब किसान और कृषि उघमी सीधे बाजार से जुड सकते हैं और अपनी व्यवसायिक क्षमताओं का विसतार कर सकते हैं। हाँलाकी, डिजिटल साक्षरता की कमी, इंटरनेट की सीमित उपलब्धता और साइबर सुरक्षा जोखिम जैसी चुनौतियाँ अभी भी बनी हुई हैं।

भविष्य में डिजिटल तकनीको के व्यापक उपयांग और किसानों व कृषि उघमियों को उचित प्रशिक्षण और अन्य सम्सयाओं का समाधान कर भारत का कृषि व्यवसाय अधिक प्रतिस्पर्धी और आत्मनिर्भर बन सकता है। इससे निर्यात, ग्रामीण उघमशीलता और संपूर्ण कृषि अर्थव्यवस्था को मजबूती मिलेगी।

संदर्भ

इ नाम, कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय(2021 2025), विश्व बैंक रिपोर्ट (2023), इंडियन कांउनसिल ऑफ एग्रीकल्चर रिसर्च (आई.सी.ए.आर)– स्मार्ट कृषि तकनीक , नबार्ड– डिजिटजल कृषि वित्तीय सहायता, माई गर्वमेंट.इन, एफसीसीआइ रिपोर्ट 2023 ।

नैनो कीटनाशकः आधुनिक कृषि की नई दिशा

डा0 संजीव कुमार [1], देवेन्द्र मंडल [2], डा0 सी0 एस0 आजाद [2]
बिहार कृषि विशवविद्यालय,सबौर, भागलपुर, बिहार
ईमेल - drsanjeevdmr@gmail.com

परिचय

भारत जैसे कृषि प्रधान देश में फसल उत्पादन को बढ़ाने और किसानों की आय में सुधार करने के लिए कीटनाशकों का उपयोग आवश्यक हो गया है। हालांकि, पारंपरिक कीटनाशकों का अंधाधुंध उपयोग पर्यावरण,मानव स्वास्थ्य और मिट्टी की उर्वरता पर नकारात्मक प्रभाव डाल रहा है। इसके अलावा, कीटों में विकसित हो रही प्रतिरोधक क्षमता के कारण पारंपरिक कीटनाशक अब कम प्रभावी होते जा रहे हैं। इस समस्या के समाधान के लिए नैनो प्रौद्योगिकी का उपयोग किया जा रहा है, जिसमें नैनो कीटनाशकों (Nano Pesticides) का विकास एक महत्वपूर्ण खोज के रूप में उभरा है। ये कीटनाशक पारंपरिक कीटनाशकों की तुलना में अधिक प्रभावी, पर्यावरण के अनुकूल और कम मात्रा में अधिक असरदार होते हैं।

नैनो कीटनाशक

नैनो कीटनाशक वे कीटनाशक होते हैं, जिनमें सक्रिय तत्व नैनोमीटर (1-100 नैनोमीटर) आकार के होते हैं।
इनका निर्माण विभिन्न नैनो सामग्री जैसे नैनो सिलिका, नैनो सिल्वर, जिंक ऑक्साइड, तांबा नैनोकणों, और कार्बन नैनोट्यूब्स से किया जाता है।
नैनो कीटनाशक सामान्य रूप से दो प्रकार के होते हैं-
1.**नैनो संरचित कीटनाशक**-ये कीटनाशक नैनो कणों से बने होते हैं और धीरे-धीरे सक्रिय तत्वों को छोड़ते हैं, जिससे प्रभाव लंबे समय तक बना रहता है।
2.**नैनो वाहक आधारित कीटनाशक** - इनमें कीटनाशक तत्वों को नैनो कणों के अंदर कैप्सूल की तरह संरक्षित किया जाता है, जिससे ये कीड़ों पर अधिक सटीक और नियंत्रित प्रभाव डालते हैं।

नैनो कीटनाशकों के लाभ

1. अधिक प्रभावशीलता और तीव्र क्रियाशीलता
नैनो कीटनाशक अपने छोटे आकार के कारण कीटों की कोशिकाओं में तेजी से प्रवेश कर उन्हें नष्ट कर सकते हैं। उदाहरणरू कार्बन नैनोट्यूब आधारित कीटनाशक कीटों के शरीर में जाकर उनकी कोशिकाओं को क्षतिग्रस्त करता है और तेजी से प्रभाव दिखाता है।

2. धीमी और नियंत्रित प्रभाव (Slow Release Mechanism)
ये कीटनाशक धीरे-धीरे सक्रिय तत्व छोड़ते हैं, जिससे इनका प्रभाव लंबे समय तक रहता है और बार-बार छिड़काव की जरूरत नहीं पड़ती।
उदाहरणरू नैनो-पॉलिमर आधारित कीटनाशक जो धीरे-धीरे घुलता है और 30-40 दिनों तक प्रभावी रहता है।

3. कम मात्रा में अधिक प्रभाव (Higher Efficiency in Lower Doses)
पारंपरिक कीटनाशकों की तुलना में नैनो कीटनाशक बहुत कम मात्रा में अधिक प्रभावी होते हैं।
उदाहरणः जिंक ऑक्साइड नैनोकण आधारित कीटनाशक, जो कम मात्रा में छिड़काव करने पर भी अधिक प्रभाव दिखाता है।

4. पर्यावरण अनुकूल (Eco Friendly)
पारंपरिक कीटनाशकों के अत्यधिक प्रयोग से मिट्टी और जल स्रोत दूषित हो जाते हैं, जबकि नैनो कीटनाशक कम मात्रा में उपयोग किए जाते हैं और अधिक प्रभावी होते हैं।
उदाहरणरू बायोडिग्रेडेबल नैनो कीटनाशक जो जैविक रूप से आसानी से विघटित हो जाता है और जल प्रदूषण को रोकता है।

5. कीट प्रतिरोधी समस्या का समाधान (Overcoming Pest Resistance)
नैनो कीटनाशक पारंपरिक कीटनाशकों की तुलना में अधिक प्रभावी होते हैं और कीटों में प्रतिरोधक क्षमता विकसित नहीं होने देते।
उदाहरणरू नैनो-सिल्वर आधारित कीटनाशक, जो कीटों की कोशिका झिल्ली को भेदकर उन्हें नष्ट करता है।

6.फसल की गुणवत्ता और उत्पादन में सुधार (Improved Crop Yield & Quality)
नैनो कीटनाशकों का उपयोग करने से फसल की गुणवत्ता में सुधार होता है और उत्पादन बढ़ता है।
उदाहरणरू तांबा नैनोकण आधारित कीटनाशक, जो फलों और सब्जियों को अधिक समय तक ताजा बनाए रखता है।

नैनो कीटनाशकों की चुनौतियाँ

1. दीर्घकालिक प्रभावों पर शोध की आवश्यकता

नैनो कणों का पर्यावरण और मानव स्वास्थ्य पर दीर्घकालिक प्रभाव अभी तक पूरी तरह से समझा नहीं गया है। संभावित खतरारू अत्यधिक उपयोग से मिट्टी में सूक्ष्म जीवों की गतिविधि प्रभावित हो सकती है।

2. उत्पादन लागत अधिक (High Production Cost)

नैनो कीटनाशकों का उत्पादन पारंपरिक कीटनाशकों की तुलना में महंगा होता है, जिससे यह छोटे किसानों क ` लिए महंगा साबित हो सकता है।

इसका समाधान सरकार द्वारा सब्सिडी और अनुसंधान के माध्यम से लागत कम करने के प्रयास से हो सकता है।

3. जैव विविधता पर संभावित प्रभाव (Effect on Biodiversity)

यदि नैनो कीटनाशकों का अत्यधिक उपयोग किया जाए, तो यह जैव विविधता को प्रभावित कर सकता है। संभावित खतरारू कुछ नैनोकण पानी में घुलकर जलीय जीवों को नुकसान पहुँचा सकते हैं।

4. किसानों में जागरूकता की कमी

भारत जैसे देश में अभी भी कई किसान नैनो कीटनाशकों के उचित उपयोग के बारे में पूरी तरह से जागरूक नहीं हैं।

समाधानरू सरकार और कृषि वैज्ञानिकों द्वारा प्रशिक्षण और जागरूकता अभियान चलाना।

नैनो कीटनाशकों का भविष्य

नैनो कीटनाशक आधुनिक कृषि में क्रांति ला सकते हैं और वैश्विक स्तर पर इनका उपयोग बढ़ रहा है।

भारत में भी कई कृषि अनुसंधान संस्थान इस क्षेत्र में काम कर रहे हैं, ताकि नैनो कीटनाशकों को सस्ता और अधिक सुलभ बनाया जा सके।

यदि इनके उत्पादन की लागत को कम किया जाए और किसानों को इनके उचित उपयोग के बारे में शिक्षित किया जाए, तो ये पारंपरिक कीटनाशकों का बेहतर विकल्प बन सकते हैं।

निष्कर्ष

नैनो कीटनाशक कृषि क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण नवाचार है, जो पर्यावरणीय समस्याओं को कम करने और फसल उत्पादन बढ़ाने में सहायक हो सकता है। हालांकि, इसके संभावित जोखिमों को ध्यान में रखते हुए अनुसंधान और सावधानीपूर्वक उपयोग आवश्यक है। यदि सही दिशा में प्रयास किए जाएं, तो नैनो कीटनाशक सतत कृषि विकास और खाद्य सुरक्षा में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं।

“नैनो तकनीक के माध्यम से कृषि को अधिक कुशल और पर्यावरण के अनुकूल बनाना भविष्य की आवश्यकता है।”

Published by -
Krishi darpan

Centre for agriculture, Innovation Research and Training (CAIRT)

krishidarpanddn@gmail.com/ krishikdpatrika@gmail.com

C/o - Nagendra Saklani marg, Banjarawala, Dehradun (Uttarakhand)
Contact No :- 08126318346, +91 9389589310
www.krishidarpan.in